वर्ष ३३ अंक ९

# वैदिक धर्म

भाद्रपद २००९

▲ सितम्बर १९५२ ▲

# वेदोंकी संहिताएँ

| | मू. | डा. व्य. |
|---|---|---|
| (१) ऋग्वेद ( इसमें सर्वानुक्रम, देवतासूची, ऋषिसूची, मंत्रसूची आदि भी है। ) | १० | १॥ |
| (२) यजुर्वेद ( वाजसनेयी -संहिता ) | ३ | ॥ |
| (३) ,, काण्व--संहिता | ४ | ॥। |
| (४) ,, मैत्रायणी-संहिता | ६ | १ |
| (५) ,, काठक--संहिता | ६ | १ |
| (६) ,, सर्वानुक्रम सूत्र ( वाजम० ) | १॥ | ॥ |
| (७) ,, वा० सं० पादसूची | १॥ | ॥ |
| (८) ऋग्वेद मंत्रसूची | २ | ॥ |

## सामगान

सामवेद कौथुम शाखीय

| | मू. | डा. व्य. |
|---|---|---|
| ग्रामगेय ( वेय प्रकृति ) गानात्मकः प्रथमः तथा द्वितीयो भागः | ६ | १ |
| प्रकृति गान ( गान भाग ) | ४ | ॥ |

## दैवत संहिता

| | | |
|---|---|---|
| दैवत संहिता प्रथम विभाग | ६ | १॥ |
| १ अग्नि देवता मंत्र २४४३ पृ. सं. ३४६ | | |
| २ इन्द्र देवता ,, ३३६३ ,, ३७६ | | |
| ३ सोम देवता ,, १२६१ ,, १५० | | |
| ४ मरुद्देवता ,, ४६४ ,, ७२ | | |
| दैवत संहिता तृतीय भाग | ६ | ॥। |

( इस तृतीय भागमें कुल १२८ देवता हैं और मंत्र संख्या ३७५८ है। )

# हिंदी पुस्तकें

## ऋग्वेदका सुबोध भाष्य

१ से १८ ऋषिका दर्शन ( एक जिल्द )
(१) मधुच्छन्दा, (२) मेधातिथि, (३) शुनःशेप (४) हिरण्यस्तूप, (५) कण्व, (६) सव्य, (७) नोधा, (८) पराशर, (९) गोतम, (१०) कुत्स, (११) त्रित, (१२) संवनन, (१३) हिरण्यगर्भ, (१४) नारायण, (१५) बृहस्पति, (१६) वागाम्भृणी, (१७) विश्वकर्मा, (१८) सप्त ऋषि.रु.२१॥, १॥ ]
(१९) वशिष्ठ ऋषिका दर्शन, ७ रु.) डा व्य १॥

## यजुर्वेदका सुबोध भाष्य

| | मू. | डा. व्य. |
|---|---|---|
| १ प्रथम अध्याय श्रेष्ठतम कर्मका आदेश | १॥ | ।= |
| २ ३० वा ,, मनुष्योंकी सच्ची उन्नतिका सच्चा साधन | २ | ।≡ |
| ३ ३२ ,, एक ईश्वरकी उपासना | १॥ | ।= |
| ४ ३६ ,, सच्ची शांतिका सच्चा उपाय | १॥ | ।≠ |
| ५ ४० ,, ईशोपनिषद् | २ | ।≠ |

## अथर्ववेदका सुबोध भाष्य

| | | |
|---|---|---|
| काण्ड १–५ | ८ रु. | १॥ |
| ,, ६–१० | ८ | १॥ |
| ,, ११–१८ | १० | १ |

## उपनिषद् ग्रंथमाला

| | मू. | डा. व्य. |
|---|---|---|
| १ ईशोपनिषद् | २ | ॥ |
| २ केन उपनिषद् | १॥ | ॥ |
| ३ कठ उपनिषद् | १॥ | ॥ |
| ४ प्रश्न उपनिषद् | १॥ | ॥ |
| ५ मुण्डक उपनिषद् | १॥ | ॥ |
| ६ माण्डूक्य उपनिषद् | ॥ | ≠ |

## साक्षात्कार ग्रंथ

| | | |
|---|---|---|
| ईश्वरका साक्षात्कार प्रथम भाग | ३ | ॥≠ |

## श्रीमद्भगवद्गीता

| | | |
|---|---|---|
| भगवद्गीता पुरुषार्थबोधिनी ( टीका समेत ) | | |
| ,, तीन पृथक् जिल्दोंमें | १५ | १॥ |
| ,, एक जिल्दमें | १२॥ | १॥ |
| ,, श्लोकार्ध सूची | ॥। | ।≡ |
| भगवद्गीता लेखमाला भाग १, २, ७ | ३॥। | १ |
| गीताका राजकीय तत्वालोचन | २ | ॥ |
| गीता कर्मयोगी गणेशानन्दजी कृत | १ | ।≠ |
| भगवद्गीता छोटी पुस्तक | १ | ।≡ |

## वाल्मीकि रामायण

| | | |
|---|---|---|
| १ बालकांड | ४ | ॥≠ |
| २ अयोध्या कांड पूर्वार्ध | ४ | ॥≠ |
| ३ ,, ,, उत्तरार्ध | ४ | ॥≠ |
| ४ अरण्यकांड | ४ | ॥≠ |
| ५ किष्किन्धाकाण्ड | ४ | ॥≠ |
| ६ सुन्दरकांड | ४ | ॥= |

७ युद्धकांड छप रहा है।

## महाभारत

| | मूल्य | डा. व्य. |
|---|---|---|
| १ आदिपर्व | ७ | १॥ |
| २ सभापर्व | ३॥ | ॥। |
| ३ शांतिपर्व ( पूर्वार्ध ) | १० | १। |

**महाभारतकी समालोचना**

| | | |
|---|---|---|
| इसके दो भाग हैं। प्रत्येक भागका मूल्य | ०॥। | ।≈ |

## वेद परिचय

| | | |
|---|---|---|
| १ वेद परिचय भाग १ | १॥ | ।= |
| २ ,, ,, २ | १॥ | ।= |
| ३ ,, ,, ३ | २ | ।≡ |

## वेद प्रवेश

| | | |
|---|---|---|
| १ मरुद्देवता का मंत्र संग्रह | ५ | ॥। |
| २ अश्विनौ देवताका मंत्र संग्रह | ५ | १ |
| ३ ऋग्वेदके अग्नि सूक्त | २ | ॥ |

## संस्कृत पाठमाला
### ( चौवीस भाग )

**( संस्कृत भाषाका अध्ययन करनेका सुगम उपाय )**

| | | |
|---|---|---|
| प्रत्येक पुस्तक | ॥ | = |
| १ से २४ भागोंका पुरा सेट | १२ | १ |

## धर्म-शिक्षाके ग्रंथ

**बालक धर्म शिक्षा** प्रथम भाग, प्रथम श्रेणीके लिये ≡

,, ,, द्वितीय भाग, द्वितीय ,, ,, ।–

**वैदिक पाठमाला** तृतीय श्रेणीके लिए ।–

## वेद-स्वयं-शिक्षक

| | | |
|---|---|---|
| वेदका स्वयं शिक्षक भाग १ | १॥ | ।= |
| ,, ,, ,, भाग २ | १॥ | ।= |

## आगम निबंध माला

| | | |
|---|---|---|
| १ वैदिक स्वराज्यकी महिमा | ॥। | = |
| २ वैदिक सर्प विद्या | ॥= | = |
| ३ वेदमें चर्खा | ॥= | = |
| ४ मानवी आयुष्य | ॥ | = |
| ५ इन्द्र शक्तिका विकास | ॥। | = |
| ६ वेदमें कृषिविद्या | ॥ | – |
| ७ छूत और अछूत प्रथम भाग | १ | ।≈ |
| ८ ,, ,, द्वितीय भाग | १ | ।≈ |
| ९ शतपथ बोधामृत | ।= | – |

## देवता परिचय ग्रंथमाला

| | | |
|---|---|---|
| १ ऋग्वेदमें रुद्र देवता | ॥= | = |
| २ वैदिक अग्निविद्या | २ | ।= |
| ३ वैदिक चिकित्सा | १॥ | ।– |

## योग साधनमाला

| | मू. | डा. व्य |
|---|---|---|
| १ ब्रह्मचर्य | १॥ | ।≡ |
| २ योगके आसन | २॥ | ॥ |
| ३ योगके आसन चित्रपट | । | – |
| ४ योगसाधनकी तैयारी | १ | ।= |
| ५ सूर्यभेदन व्यायाम | ॥। | ।– |
| ६ सूर्य नमस्कार | १ | ।– |
| ७ ,, ,, चित्रपट | ≡ | – |

## उद्बोधक पुस्तकमाला

| | | |
|---|---|---|
| १ विजया दशमी ( दशहरा ) | ॥ | ≈ |
| २ भारत वर्षके हिंदू सम्राट् | ॥। | ।– |
| ३ आर्योंका भगवा ध्वज | । | |
| ४ हिंदी मुसलमानोंके कारनामोंका चिठ्ठा | ।= | |
| ५ श्री छत्रपति शिवाजी महाराजका राजा जयसिंहको पत्र | ≈ | |
| ६ शेषशायी नारायण | = | |
| ७ स्पिनोझा और उसका दर्शन | २ | ॥ |

## वैदिक व्याख्यान माला

( १ ) मधुच्छन्दा ऋषिका अग्निमें आदर्श पुरुषका दर्शन। ( २ ) वैदिक अर्थव्यवस्था और स्वामित्वका सिद्धान्त। ( ३ ) अपना स्वराज्य। ( ४ ) श्रेष्ठतम कर्म करनेकी शक्ति और सौ वर्षोंकी पूर्ण दीर्घायु। ( ५ ) व्यक्तिवाद और समाजवाद। ( ६ ) ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

ये व्याख्यान तैयार हैं। दूसरे तैयार हो रहे हैं। [ प्रत्येक व्याख्यानका मूल्य ।≈) छः आने और डा. व्य. =) दो आने ]

विष्णु सहस्र नाम मू. १॥ ट. ख. ॥

## मासिक पत्र

**वैदिक धर्म** वार्षिक चंदा ५ ) वी. पी से ५॥ )

## पं. मदन मोहन विद्यासागर
## तेनाली, के पुस्तक

| | |
|---|---|
| १ वेदोंकी अन्तःसाक्षी का महत्त्व | ०—९—० |
| २ संस्कार महत्त्व | ०—९—० |
| ३ जन कल्याण का मूल मन्त्र | ०—८—० |
| ४ आर्य स्तोत्र | ०—८—० |

मंत्री- स्वाध्याय-मंडल, भारतमुद्रणालय, आनन्दाश्रम, किल्ला पारडी, (जि. सूरत )

स्वाध्यायमण्डल द्वारा संचालित

## संस्कृत–भाषा–प्रचार-समितिकी परीक्षाओंका सन् १९५२ ई.

का

# वि व र ण

| क्रमाङ्क | केन्द्रनाम | योग | क्रमाङ्क | केन्द्रनाम | योग |
|---|---|---|---|---|---|
| १ | भरुच | १३७ | ३१ | मालिज | १५ |
| २ | चांदोद | ९३ | ३२ | सामरखा | ६७ |
| ३ | वडनगर | २३३ | ३३ | भावनगर | १२ |
| ४ | धोलका | ५१ | ३४ | आणंद ( शारदा हाईस्कूल ) | ७० |
| ५ | वासद | २८ | ३५ | धीनोज | ३५ |
| ६ | बडौदा | १०९ | ३६ | बारडोली | २४ |
| ७ | बोरिवली | ४४ | ३७ | बलसाड | ५० |
| ८ | खेराल | १६ | ३८ | अहमदाबाद | ३८ |
| ९ | मंडाला | ८४ | ३९ | सोनगढ | ३१ |
| १० | सारसा | ६० | ४० | पंडोली | १६ |
| ११ | व्यारा | ६० | ४१ | वल्लभ विद्यानगर १० गीता = | ८२ |
| १२ | सैजपुर | ४७ | ४२ | शिनोर | १२ |
| १३ | नारगोल | ५२ | ४३ | आणंद ( पायोनीर हाईस्कूल ) | ५१ |
| १४ | बगवाडा | ३७ | ४४ | अंबाव | १५ |
| १५ | हांसोट | ८४ | ४५ | नडियाद | ३६ |
| १६ | विसनगर | ६९ | ४६ | बडौदा ( ब्रह्मचर्याश्रम ) | १९ |
| १७ | काविठा | ५३ | ४७ | जोधपुर | २४ |
| १८ | लांघनज | २६ | ४८ | गूना | १४ |
| १९ | चिखोदरा | २४ | ४९ | बैरागढ | २५ |
| २० | महेमदाबाद | ६६ | ५० | बेगमपेठ | ४४ |
| २१ | कंडाच | ३९ | ५१ | मंडलेश्वर | १८३ |
| २२ | बिलिमोरा | १३ | ५२ | बड़वाहा | १२ |
| २३ | चकलाशी | १८ | ५३ | केबिला | ४४ |
| २४ | कपडवंज | ८४ | ५४ | उन्हेल | २२ |
| २५ | गणदेवी | १४ | ५५ | वरंगल | ६ |
| २६ | वालोड | ३१ | ५६ | रामायणपेठ | १० |
| २७ | आंखली | ६६ | ५७ | महीदपुर | २५ |
| २८ | सुरत | २६१ | ५८ | करडकल | १३ |
| २९ | पारडी | १८ | ५९ | रामपर्ती | १५ |
| ३० | नवसारी | १८८ | ६० | रायश्री | ९ |

| क्रमाङ्क | केन्द्रनाम | योग | क्रमाङ्क | केन्द्रनाम | योग |
|---|---|---|---|---|---|
| ६१ | ताहरपुर भबीसा | ६ | ९५ | बाम्रगोद | ७२ |
| ६२ | पोलंगल | १४ | ९६ | नांदेड | १५ |
| ६३ | कनखल | १४ | ९७ | बेळगांव | ७ |
| ६४ | जयपुर | ३९ | ९८ | केज | २५ |
| ६५ | उरई | ५१ | ९९ | फैजपूर | २० |
| ६६ | श्रीनगर | १०० | १०० | चांदूररेल्वे | ८४ |
| ६७ | सागाम | ११ | १०१ | बसमतनगर | १४ |
| ६८ | ददिया | २९ | १०२ | मेहकर | ६ |
| ६९ | ज्वालापुर | २० | १०३ | शेगांव | २९ |
| ७० | अजमेर | ६५ | १०४ | नागपूर | ११३ |
| ७१ | बहेडी | ३८ | १०५ | धामणगांव | ३२ |
| ७२ | नूतनकल | १३ | १०६ | नेवासे | ४० |
| ७३ | खामगांव | १२७ | १०७ | वर्धा | ८० |
| ७४ | जालना | १५९ | १०८ | सावनेर | ८२ |
| ७५ | अंबाजोगाई | २५० | १०९ | नान्दूर | ४३ |
| ७६ | इन्दोर | ६१ | ११० | मलकापुर | ४८ |
| ७७ | हैद्राबाद | ७५ | १११ | आकोला | १३० |
| ७८ | जलगांव-जामोद | ४८ | ११२ | गौहाटी | ५ |
| ७९ | हिंगणघाट | ५६ | ११३ | पटियाला | ७७ |
| ८० | मानवत | २६ | ११४ | इन्दुपुर ( कटक ) | १२ |
| ८१ | तलमोड | ४१ | ११५ | बिजापुर २ गीता = | ३३ |
| ८२ | पैठण | ४२ | ११६ | कुंभकोणम् | २२ |
| ८३ | पाटोदा | २८ | ११७ | कल्याण | १३ |
| ८४ | अष्टी | ४० | ११८ | पालिताणा | १७ |
| ८५ | नन्दुरबार | ८५ | ११९ | मियासरमण | ५३ |
| ८६ | कलम | ४८ | १२० | नीमच | १०४ |
| ८७ | तेल्हारा | ४४ | १२१ | उदगीर | ३७ |
| ८८ | सिंदी | १७ | १२२ | जबलपुर | ७ |
| ८९ | कारंजा | ३५ | १२३ | अचलपुर | २८ |
| ९० | भुसावल | २१ | १२४ | एलम | २८ |
| ९१ | अमरावती | ५८ | १२५ | हसनपुर | २३ |
| ९२ | देऊळगांवराजा | २० | १२६ | डेरोल | १२ |
| ९३ | जामखेड | १४ | १२७ | पांथेणि चेन्नावरम् | ९ |
| ९४ | बीड | ९३ | १२८ | सांधिएर | १३ |

संपादक
पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

# वैदिक धर्म

सहसंपादक
श्री महेशचन्द्र शास्त्री, विद्याभास्कर

वार्षिक मूल्य म. आ से ५) रु.    वी पी से ५॥) रु. विदेशके ६॥) रु.

## विषयानुक्रमणिका

# मराठी सूचीपत्र

श्री वाल्मीकीय रामायण, ( मराठी अनुवाद )

| | | |
|---|---|---|
| १ बालकांड | मू. ४ ट. ख. | ॥= |
| २ अयोध्याकांड पूर्वार्ध | ४ | ॥= |
| ३ ,, उत्तरार्ध | ४ | ॥= |
| ४ अरण्य कांड | ४ | ॥= |
| ५ किष्किन्धाकांड | ४ | ॥= |
| ६ सुन्दर कांड | ४ | ॥= |

७ युद्धकांड छापलें जात आहे

## पुरुषार्थ ग्रंथमाला

| | | |
|---|---|---|
| १. एकादशीचा उपवास. | ८४ | |
| २. ईशोपनिषद् | ८१० | |
| ३. ईशोपनिषदांतील सामर्थ्याचें राजकारण | ८८ | |
| ४. सनातन धर्माचें स्वरूप भाग १ ते ३ | ८१२ | |
| ५. सूर्य नमस्कार. | ८१२ | |
| ६, ,, चित्रपट | ८३ | |
| ७. पृथ्वीवर अमृत-गोदुग्ध | ८४ | |
| ८. आसनांचा चित्रपट | ८४ | |
| ९. आरोग्यासाठीं योग साधन १ ला भाग, | मू. २ रु. ट. ख, | ।= |
| १०. आरोग्यसाठी योग साधन २ रा. भाग, | मु. २ रु ट. ख, | ।= |
| ११. सूर्यभेदन व्यायाम | ॥। | = |
| १२. मंगलमूर्ति गणेश | २ | ॥ |
| १३. गणेशाथर्व शीर्ष | | ॥= |

## संस्कृत स्वयं शिक्षक

एका वर्षात उत्तम संस्कृतज्ञ व्हा !

प्रत्येक भागाचें मूल्य. ।। रु.

२४ भागांचा संपूर्ण सेट मूल्य १२ रु. ट. खर्च १ रु.

## मराठी हिंदुस्तानी कोश

संपादक प्रा. वामनराव चोरघडे M, A. B T.

प्रस्तावना श्री काकासाहेब कालेलकर मूल्य. २) रु. ट. ख. ।=

## श्रीमद्भगवद्गीता
## पुरुषार्थ बोधिनी टीकेसह

टीका लेखक पं. श्रीपाद दामोदर सातवळेकर,

| | | |
|---|---|---|
| १. तीन निरनिराळ्या भागामध्यें मूल्य १५ रु. ट. ख. | | १।। |
| एका बांधणींत | १२।। | १।। |
| २. गीतेंतील राजकीय तत्वज्ञान | २ | ॥ |
| ४. ,, श्लोकार्ध सुची | ॥। | ।= |
| ५. भगवद्गीता लहान पुस्तक | १ | ।= |

## भगवद्गीता निबंधमाला.
## भाग १ से ७

प्रत्येक भाग. कि. २ रु व. ट. खर्च. ॥

## विविध पुस्तकें

| | | |
|---|---|---|
| १ स्वराज्या संबंधानें ऋषींचे संदेश | । | – |
| २ देवे मंत्राचा अर्थ | ।= | – |
| ३ वैदिक ज्ञानाची उपयुक्तता | = | – |
| ४ विजया दशमी ( दसरा ) | ॥ | = |
| ५ हिंदु संघटन | ८≡ | – |
| ६ अखंड हिंदुस्थान | ।= | = |
| ७ छत्रपति शिवाजी महाराजांचें जयसिंहास पत्र | = | – |
| ८ अहिंसेच्या मर्यादा | – | – |
| ९ आगाखानी संप्रदाय | ≡ | – |
| १० भारतांतील इस्लामी करणाचीं कारस्थानें | ॥।≡ | |
| ११ मुसलमानांच्या आक्रमणाची जागतिक पार्श्वभूमि | १। | ॥ |
| १२ प्राचीन आर्यांचे राजकीय विचार | ।॥ | = |
| १३ पौराणिक गोष्टींचा उलगडा | ॥। | = |
| १४ कला आणि इतर निबंध | ॥ | = |
| १५ भारतीय संस्कृति | ३ | ॥= |
| १६ विष्णु सहस्रनाम | १॥ | ।= |

## मासिक पत्र

पुरुषार्थ वार्षिक वर्गणी ४ रु. वी पी. नें ४॥=

## उषा-प्रकाशनाचीं पुस्तकें

| | |
|---|---|
| १ जीवन प्रकाश | मूल्य २॥ रुपये |
| २ रातराणीची फुलें [ लघुकथा ] | १॥ |
| ३ ज्वाला [ कादंबरी ] | १॥। |
| ४ लोकहितवादींची शतपत्रें | ४ |
| ५ सात पाहुण्या [ सात नाटिका ] | १॥। |
| ६ दीपदान [ लघुकथा ] | १॥ |
| ७ अंतर [ कादंबरी ] | १॥। |
| ८ यौवन [ लघुकथा ] | १॥। |
| ९ कल्चर्ड मोती [ लघुकथा ] | २ |
| १० शूर अबला [ चरित्रे ] | ॥ |
| ११ सिंदूची कथा [ कादंबरी ] | १ |

मंत्री- स्वाध्याय-मंडळ, भारतमुद्रणालय, आनन्दाश्रम, किला पारडी, ( जि. सूरत )

वर्ष ३३ **वैदिक धर्म** अंक ९

क्रमांक ४५

भाद्रपद, विक्रम संवत् २००९, सितम्बर १९५२

# वीरोंका काव्यगायन

प्र मंहिष्ठाय बृहते बृहद्रये सत्यशुष्माय तवसे मतिं भरे।
अपामिव प्रवणे यस्य दुर्धरं राधो विश्वायु शवसे अपावृतम्॥

ऋ० १।५७।१

बलवृद्धिके लिये ही प्रगट हुआ हुआ, तथा समस्त आयुमें जिसका निरन्तर बढता हुआ यश शत्रुद्वारा पराभूत होना सर्वथा असम्भव है ऐसा इन्द्र है। जिस प्रकार ऊंचाईसे बहकर आते हुए जलप्रवाहको रोकना असम्भव रहता है उसी प्रकार इन्द्रके यशके फैलावको रोकना असम्भव है। इसके लिये मैं उस श्रेष्ठ, महान्, धनवान्, बलशाली और प्रभावयुक्त सामर्थ्यवान् इन्द्रकी ही बुद्धिपूर्वक प्रशंसा गाया करते हैं।

शत्रुद्वारा पराभूत होनेका अवसर कभी भी प्राप्त न हो, सारे जीवनमें यश और सामर्थ्य बढता ही रहे ऐसा सामर्थ्य शरीरमें होवे। जिस प्रकार ऊंचाईसे बहनेवाले प्रवाहका वेग बलवान व तेज रहता है और उसे कोई भी रोक नहीं सकता, इसी प्रकार वीरोंका सामर्थ्य बढता ही रहे। इसमें प्रतिबन्ध करनेवाले शत्रुका विनाश हो। इस प्रकार जो वीर, बलवान्, प्रभावयुक्त, सामर्थ्यशाली और धनवान होगा उसीका गुणगान बुद्धिपूर्वक करे। क्योंकि ऐसा करनेसे तदनुरूप बननेकी बुद्धि उत्पन्न होती है एवं उन्नतिका मार्ग खुला हो जाता है।

# ગુજરાતી પુસ્તકોની યાદી

**૧. શ્રીમદ્‌ભગવદ્‌ ગીતા**

ટીકા લેખક પં. શ્રી. દા. સાતવળેકર ગીતાલંકાર આ ગીતાના ૧૮ અધ્યાય બે પુસ્તકોમાં આવી જાય છે.

કિંમત ૧૨॥. ટ. ખ. ૧॥. વી. પી.થી. ૧૪॥.

**૨. સંસ્કૃત સ્વયં શિક્ષક**

(સંસ્કૃત ભાષાનો અભ્યાસ કરવાનો સહેલો ઉપાય)

| | કિંમત | ટ. ખ. |
|---|---|---|
| ભાગ ૧ થી ૬ દરેક ભાગની | ૧- ૮-૦ | ૦-૬-૦ |
| સૂર્ય નમસ્કાર | ૦-૧૨-૦ | ૦ ૫-૦ |
| ,, ,, ચિત્રપટ | ૦- ૪-૦ | ૦-૧-૦ |
| સૂર્યભેદન વ્યાયામ | ૦ ૧૨-૦ | ૦- ૫ ૦ |
| યજુર્વેદ અધ્યાય ૪૦ ઇશોપનિષદ્‌ | ૨- ૮-૦ | ૦- ૭-૦ |
| કઠોપનિષદ્‌ | ૧- ૮-૦ | ૦ ૬ ૦ |
| વેદમાં રોગજંતુ શાસ્ત્ર | ૦- ૮-૦ | ૦- ૫-૦ |
| ભારત વર્ષના હિંદુસમ્રાટ | ૧ ૦-૦ | ૦- ૫-૦ |
| વૈદિક સ્વરાજ્ય મહિમા | ૦-૧૨ ૦ | ૦- ૫-૦ |
| યજ્ઞોપવિત સંસ્કાર રહસ્ય | ૩- ૦-૦ | ૦- ૮ ૦ |
| વેદામૃત મોટું પુસ્તક | ૩- ૦-૦ | ૦-૧૨-૦ |
| વેદામૃત પ્રચારાર્થ નાનું પુસ્તક | ૦- ૪-૦ | ૦- ૬ ૦ |
| સાવકાર સૂત્રો | ૦-૧૪-૦ | ૦- ૫ ૦ |
| પૃથ્વીપરનું અમૃત ગાયનું દૂધ | ૦- ૮-૦ | ૦- ૫-૦ |
| ભારત | ૧- ૦ ૦ | ૦- ૬-૦ |
| બ્રહ્મચર્ય | ૧- ૮ ૦ | ૦- ૬-૦ |
| માનવી આયુષ્ય | ૦- ૬-૦ | ૦- ૧-૦ |

પ્રાચીન વેદશાસ્ત્રનાં રહસ્યને ગુજરાતી ભાષામાં રજૂ કરતું માસિક **'વેદ સંદેશ'** -વાર્ષિક લવાજમ રૂ. ૫) વી. પી. થી રૂ. પા=

—:o:—

## संस्कृत पुस्तक

**कुमुदिनी चंद्रः** मूल्य रु. ४ डा. व्य. ॥

—•:-:o—

# List of English books

**BHAGAWADGITA**

| | | | |
|---|---|---|---|
| Chapter 1 to 3 | Price Rs. 4/- | Postage Aas | 12 |
| ,, 4 & 5 | ,, ,, 3/- | ,, | ,, 10 |
| ,, 6 | ,, ,, 1-8 | ,, | ,, 7 |
| ,, 7 & 8 | ,, ,, 2/- | ,, | ,, 8 |
| ,, 9 & 10 | ,, ,, 2 | ,, | ,, 8 |
| ,, 11 th | ,, ,, 2 | ,, | ,, 8 |

SURYA NAMASKAR English by--Shrimant Raja Saheb of Aundh Price Rs. 1-0-0 P. As 10

BHARAT (India as Seen & known by Foreigners)

Price Rs. 2- Postage As. 10.

Shivaji's Letter to Jaysinh As, 4 Postage As 5.




મંત્રી— **સ્વાધ્યાય-મંડળ, ભારત મુદ્રણાલય,** 'આનંદાશ્રમ' **કિલ્લા-પારડી** (જિ. સુરત)

# भारतीय संस्कृतिका स्वरूप

[ लेखांक १७ ]

( लेखक— श्री. पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर )

## राजनियन्त्रित शिक्षाके दुष्परिणाम

वैदिककालकी शिक्षाप्रणाली किस प्रकारकी थी तथा उसके द्वारा किस प्रकारके तरुण एवं तरुणियोंका निर्माण होता था, यह बात हमने पिछले कुछ लेखों द्वारा स्पष्ट की है। इसी प्रकार इस बात पर भी प्रकाश डाला गया कि उस युगमें राष्ट्रकी शिक्षाव्यवस्था सर्वथा ब्राह्मणोंके आधीन थी एवं उसके ऊपर राज्यसत्ताका नियन्त्रण बिल्कुल भी नहीं था।

स्वतन्त्र शिक्षा प्रणालीका क्या अर्थ है तथा राज्यसत्तासे नियन्त्रित शिक्षाप्रणालीमें क्या न्यूनाधिकता है ? इस बातको अब हमें अंशतः विचार करना है। वैदिक संस्कृतिके अन्तर्गत इस भेदको हम जरा सावधानी पूर्वक देखेंगे। क्योंकि इससे राष्ट्रीय जीवनपर बहुत बडा परिणाम हुआ करता है। अतएव इसपर अधिक सावधानीसे विचार करना आवश्यक है।

वैदिककालमें शिक्षाव्यवस्था स्वतन्त्र थी, राज्यशासनका नियन्त्रण उसपर नहीं था। इसका परिणाम राष्ट्रपर क्या होता था, यह बात इस लेखमें बताई जारही है। प्रथमतः यही देखेंगे कि राज्यनियन्त्रित शिक्षाका क्या भयङ्कर परिणाम होता है।

### कौरवोंका महाविद्यालय

धृतराष्ट्रके राज्यमें भीष्म पितामह बहुत बडे एवं प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। पण्डु अथवा धृतराष्ट्रमेंसे किसीके भी सिंहासनारूढ होनेपर पितामह भीष्मके अधिकारोंमें किसी प्रकारकी न्यूनाधिकता नहीं आनेवाली थी। विद्या, राजनीति, शौर्य एवं प्रतिष्ठाके कारण भीष्मपितामह सर्वतोपरि श्रेष्ठ थे और सभीके लिये आदरास्पद थे। इस पुरुष श्रेष्ठने विचार किया कि घरके ही १०१ धृतराष्ट्रके पुत्र और ५ पाण्डव इस प्रकार १०६ विद्यार्थी हो जाते हैं, सौ पचास सरदारोंके बच्चे हो जावेंगे। अतः एक पूरा महाविद्यालय तो घरके घरमें ही हो जावेगा। यह सोचकर उन्होंने एक विद्यालय खोल दिया।

किसी भी गुरुकुलमें इतने तरुणोंको भेजनेकी अपेक्षा हम यदि यहीं अपना विद्यालय खोल दें तो क्या हानि है ? बालक घरके घरमें रहेंगे, स्वयंका निरीक्षण रहेगा, अच्छे आचार्योंको रख लिया जावेगा और अपने ही आधिपत्यमें विद्यालय चल निकलेगा। यह सब सोच विचार कर उन्होंने अपने विद्यालयका उद्घाटन कर दिया और हास्तिनापुरमें उसका कार्य प्रारम्भ हो गया। सौभाग्यसे 'शापादपि शरादपि' की कोटिके द्रोण जैसे सुयोग्य आचार्य प्राप्त हो गये। कृपाचार्य भी कोई कम न थे। स्वयं पितामह भीष्म निरीक्षणका कार्य करते थे और द्रोणाचार्य पर शिक्षाका सम्पूर्ण उत्तरदायित्व था। इसीप्रकार अन्य आचार्य भी किसी प्रकार कम नहीं थे।

वैयक्तिक योग्यताकी दृष्टिसे यदि देखा जाय तो भीष्म, द्रोण, कृप ये बहुत ही बडे व्यक्ति थे और इनमें किसी प्रकारकी कोई कमी न थी। किन्तु राजा धृतराष्ट्रके नौकर थे तथा इस विद्यालयमें पढनेवाले युवराज दुर्योधनके भी नौकर थे यह संबंध उपेक्षणीय, अतएव विस्मरणीय न था। दुर्योधन द्रोणाचार्यका शिष्य था; किन्तु वह युवराज बननेवाला था अपने इस भावी पदको वह जानता था और इस बातका अभिमान उसके अन्तःकरणमें विद्यमान था। यही कारण था कि वह सदैव कुचेष्टायें करनेसे बाज नहीं आता था, पाण्डवोंके उत्कर्षको सहन नहीं करता था और द्रोणाचार्यको अपना नौकर समझता था !!

राजाका नियन्त्रण होते ही इस प्रकार मानसिक सन्तुलन विकृत होकर छोटे बडेकी भावना बढने लगती है। इसीके साथ कौरवोंके घरमें फैले हुए राजनैतिक घटनाचक्र का भी परिणाम इसपर होने लगा। एकलव्य हीनजातीय एक वन्य व्यक्ति था, अतः उसे प्रवेशपत्र नहीं मिल सका। आचार्य महोदय अर्जुनकी ओर मनःपूर्वक आकर्षित होने लगे और कौरवी राजनीतिके प्रति भी उन्हें कुछ घृणासी होने लगी; किन्तु यह सब प्रगट करना अनुशासनकी दृष्टिसे वे अवैधानिक, अतएव अनुचित समझते थे। परिणामस्वरूप दुर्योधनके मनमें आचार्यके विषयमें संशय और अर्जुनके विषयमें द्वेष बढने लगा।

कौरवोंके दृष्टिकोणसे द्रोणाचार्यका मेल न होनेपर भी अनुशासनके नामपर उन्हें तदनुसार ही बर्तना पडता था। इसका अच्छा उदाहरण गोग्रहणकी घटनाके रूपमें दी जा सकती है। गायोंको चुरानेके लिये एक प्रकारका डाका डालनेके लिये भीष्म, द्रोण और कृप जैसे व्यक्तियोंका जाना वेतनके लोभके कारण होनेवाली अवनत अवस्थाका ही निदर्शक है। किसी भी स्वतन्त्र गुरुकुलका आचार्य इस प्रकार न गया होता और न राजाने ही उसे ऐसे कार्यके लिये आज्ञा ही दी होती। कॉलेजके प्रिन्सिपल गायोंको चुरानेके लिये जावें, यह कितनी अधोगति है? यह अधोगति राजाके नियन्त्रण के कारण ही उत्पन्न हुई। द्रोणाचार्य भी ऐसी स्थितिमें परतन्त्रसे ही रहे।

इसी प्रकार अभिमन्युवधके समय भी सारा दायित्व इन्हीं आचार्य महोदयपर ही थी। इससे पूर्व भरी सभामें द्रौपदीको नग्न करनेका जो प्रकार हुआ वह भी इन्हींके सामने हुआ था। ये लोग 'धिक् धिक्' करते हुए वहीं बैठे रहे। किन्तु नौकर होनेके कारण वे प्रतिवाद न कर सके। आचार्यके लिये ऐसे कृत्य भूषणावह तो नहीं माने जा सकते। किसी स्वतन्त्र गुरुकुलका आचार्य इस प्रकार कभी न गया होता और राजाने उसे विवश भी न किया होता। कॉलेजके ये प्रिंसिपल गायोंकी चोरीके लिये जाते हैं! 'यह कितनी अधोगति? यह सब राज्य नियन्त्रणके कारण ही हुआ। इसी कारण द्रोणाचार्य परतन्त्र बने।'

पाण्डवोंसे पूर्व तथा उनके समय अनेक गुरुकुल थे। किन्तु किसी भी गुरुकुलके आचार्यको गायें चुरानेके लिये राजाने नहीं कहा। ऐसा न हुआ न कहीं ऐसा होना सम्भव ही था। क्योंकि ऋषियोंके गुरुकुल स्वतन्त्र थे और उनपर राजसत्ताका अधिकार नहीं चलता था। अतः किसी भी ऐसे कार्यके लिये राजालोग गुरुकुलके आचार्योंपर दबाव नहीं डाल सकते थे।

## वेतनधारी प्राध्यापक

राजसत्ताका नियन्त्रण होते ही स्वातन्त्र्यको समाप्त हुआ ही समझना चाहिये। तथा स्वातन्त्र्यके विनाशका निश्चित परिणाम मानवताका अभाव ही होता है। सभी स्वतन्त्र मनुष्य मानवताके आदर्श होते हैं, ऐसी बात नहीं है; किन्तु स्वतन्त्र वातावरणमें रहनेवाले तथा नगरके व्यवहारोंसे सम्बन्ध न रखनेवाले और मानवधर्मकाही विचार करनेवाले स्वतन्त्र गुरुकुलोंके स्वतन्त्र आचार्य जितने परिणाममें मानवताके दर्शन कर सकते हैं उतने वेतनधारी प्राध्यापक नहीं कर सकते। यह बात सर्वथा सत्य है।

जहाँके प्राध्यापक गायें चुरानेके राजाके षड्यन्त्रमें सम्मिलित हो सकते हैं वहाँके शिष्योंपर इन बातोंका कितना दुष्परिणाम होता होगा? इसका विचार पाठक ही करें। आजके सरकार नियन्त्रित शिक्षणालयोंके आचार्य यद्यपि आज गायें चुरानेके लिये नहीं जाते तथापि सरकार पाठ्यक्रमका निर्धारण करे और तदनुसार अध्यापक पढावें, ऐसी स्थितिमें उन्हें कार्य करना पडता है। शिक्षाक्रममें किसी प्रकारके सुधारका अधिकार इनका नहीं है। वेतन वृद्धि पर ही इनका पूरा ध्यान रहता है। छात्रसमूह प्राध्यापकोंके विरुद्ध सत्याग्रह करने लगता है। आजकी यह परिस्थिति सब जानते हैं। इन सबका मूल कारण सरकारी नियन्त्रण ही है।

## स्वतन्त्र गुरुकुलोंकी शिक्षा

अब हम स्वतन्त्र गुरुकुल पद्धतिकी शिक्षाका संक्षेपसे

विचार करेंगे । इनके कुलपति, कुलगुरु, अथवा आचार्य-पर राजाका नियन्त्रण नहीं होता था । वे अपने गुरुकुलकी शिक्षाप्रणाली निर्धारित करनेमें सर्वथा स्वतन्त्र थे । मानवताके स्तरका अधिकाधिक ऊँचा उठाना ही उनका ध्येय था । इसी उद्देश्यको सामने रखकर वे अपना कार्य किया करते थे । गुरुकुलोंमें कोई भी अध्यापक वेतनधारी नहीं होता था । वेतनके कारण आनेवाला दब्बूपन उनमें नहीं था । मुख्य आचार्य अथवा कुलपतिको अन्नवस्त्रके अतिरिक्त किसी भी वस्तुकी आवश्यकता नहीं रहती थी । सभी अध्यापक वानप्रस्थी होनेके कारण उन्हें घरका मोह नहीं होता था; यही कारण था कि उनके पीछे कोई आर्थिक चिन्ता नहीं थी । खानेके लिये अन्न, पहननेके लिये वस्त्र, बीमार होनेपर औषध और रहनेके लिये घर मिलनेपर उनकी जीवन सुचारु रूपसे चल जाता था । गुरुकुलोंमें इन सभी बातोंकी पूरी व्यवस्था रहती थी । इसलिये उन्हें किसीकी पर्वाह नहीं थी और वे पूरी स्वतन्त्रतासे अपना काम करते थे । राजालोग भी इनकी रक्षा किया करते थे, किन्तु अपना नियन्त्रणका अङ्कुश नहीं रखते थे ।

इसलिये सभी प्राध्यापक पूर्णतः स्वतन्त्रवृत्तिके हुआ करते थे । किन्तु उनका आदर राजदरबारोंमें बहुत अधिक था । इनमेंसे यदि कोई राजसभामें पहुँचे तो सभा उठकर उसका सन्मान करती थी । पासमें पैसा नहीं और पैसेको स्पर्श भी करना नहीं तथापि इतना अधिक उनका सन्मान था । यदि कोई गुरुकुलका स्नातक मार्गसे जा रहा हो तो राजा भी उसे मार्ग दिया करता था । यह था स्नातकोंके सन्मानका तात्कालीन स्तर । पैसा और अधिकार शून्यके बराबर किन्तु सन्मान खूब, यह थी स्थिति । आजके प्राध्यापक वेतननिष्ठ हैं; अतः उनका सन्मान आज नहीं के बराबर है ।

## समताका व्यवहार

गुरुकुलोंमें समताका व्यवहार था और यही उनकी सर्वाधिक विशेषता थी । पुत्र राजाका हो, सरदारका हो या किसी दरिद्रका हो, उसके गुरुकुलमें प्रविष्ट होनेपर उसके घरका जीवनस्तर समाप्त होकर गुरुकुलके समान-स्तरका जीवन आरम्भ हो जाता था । भगवान् श्रीकृष्ण अमीरीमें पले पोसे और सुदामा अत्यन्त दरिद्रतामें पनपा हुआ था, किन्तु गुरुकुलमें उन दोनोंका जीवन समान था । धनवानोंके पुत्र यहाँ आकर अपना ऐश्वर्य भूल जाते थे और दरिद्रोंकी सन्तान यहाँ आकर अपना दारिद्र्य भूल जाती थी और वे सब राष्ट्रके सुपुत्र बनकर विद्यामाताके उदरमें सममावसे रहने लग जाते थे ।

निवास, भोजन, वस्त्र, विद्या आदि सभी विषयोंमें यहां पूर्ण समानता रहती थी । इसलिये किसीको विषमताका आभास भी नहीं होता था ।

आजका विद्यार्थी कॉलेजमें हो या बोर्डिङ्गमें हो, वह अमीरीकी या गरीबीकी भावनासे अभिभूत रहता है । अतः आधुनिक शिक्षणालयोंमें द्वेषकी मात्रा अधिक रहती है । हम समताकी चाहे जितनी डींग हांके, किन्तु फिर भी इस विषमताको दूर करना किसीके लिये भी सम्भव नहीं है ।

## विद्वेषकी अभिवृद्धि

वेतननिष्ठ प्राध्यापक सरकारी सहायता प्राप्त होनेके कारण हुकूमत जमायेंगे और 'हम फी देते हैं' यह कहकर विद्यार्थी अपना अधिकार जतायेंगे । इस प्रकारका यह संघर्षमय वातावरण आजके विद्यालयोंमें दिखाई पड़ रहा है । इस बीचमें मानवताके उच्च स्तरका आविर्भाव किस प्रकार सम्भव है ? यही कारण है कि समानताके नारे लगनेपर भी आज विषमता और विद्वेष अभिवृद्ध होता जा रहा है । साम्यवादादि अनेक वादोंका आज अस्तित्व दिखाई दे रहा है और उनमेंसे विद्वेषकी आग निकलती जा रही है । गुरुकुलोंमें यह सब धांधली नहीं थी । राष्ट्रीय दृष्टिसे जिसे 'अत्यन्त महत्वपूर्ण विशेषता' कहा जा सकता है ।

राष्ट्रकी तैयारी करनेकी दृष्टिसे तथा राष्ट्रमें समता एवं अविद्वेष द्वारा सम्भाव्य उन्नतिकी दृष्टिसे वर्तमान तथा प्राचीन शिक्षापद्धति पर विचार करना चाहिये, जिससे स्पष्टतः सिद्ध हो सकेगा कि वर्तमान पद्धति अनेक दोषोंसे पूर्ण है तथा प्राचीन पद्धति अत्यन्त उन्नतिसाधिका है ।

जनता धनधान्य एवं वस्त्र प्रावरण द्वारा गुरुकुलोंको सहायता करती थी । धनी लोग गायें, भूमि एवं वाहन आदि दे दिया करते थे । राजाओंसे संरक्षण प्राप्त हो जाता था । किन्तु यह सब गुप्त दानके समान था । किसीका नाम

व्यक्त नहीं किया जाता था। हजारों विद्यार्थियोंका पालन-पोषण गुरुकुलोंमें होता था। उनका सम्पूर्ण व्यवस्था-व्यय इन दानोंमेंसे किया जाता था। फी नहीं ली जाती थी। विद्यासमाप्त होजानेके पश्चात् विद्यार्थी गुरुदक्षिणा दिया करते थे और वह गुरुकुलके कोषमें जमा हो जाती थी। शिक्षा निःशुल्क थी।

आजका विद्यार्थी फीस देता है और पढता है। जिसके पास फी नहीं है वह पढ नहीं सकता। वैदिककालमें ऐसा नहीं था। गुरुकुलमें विद्यार्थीके प्रविष्ट होते ही वह गुरुकुलका हो जाता था। उसे न फी देनी पडती थी और न अन्य कुछ। अध्ययन करे और अध्ययन समाप्त हो जानेतक रहे। १२-२४-३६ और ४८ वर्षों तक भी वहाँ रहनेका प्रबन्ध था। किसी प्रकारका कोई प्रतिबन्ध नहीं था, कोई फी के लिये पूछता नहीं था। स्वतन्त्र वातावरणमें तैयार होकर विद्याध्ययन समाप्त होनेपर वहाँके विद्यार्थी बाहर निकलते थे।

फी नहीं थी। यम-नियमोंका पालन करना पडता था और इनमें जो प्रवीण होता था उसीको विशेष विद्याके लिये चुना जाता था। इस कारण शुद्ध आचरणके सच्छील शिष्यको ही सामर्थ्यकी शिक्षा दी जाती थी। आज फी भरनेवाला गुण्डा हो या सज्जन हो उसे भौतिक विज्ञान भी सिखाया जाता है और बहुत बडी शक्ति एक नालायकके हाथ सौंप दी जाती है। इसीलिये संसारमें अणुबंब बन रहा है और संसार संहारकी ओर प्रवृत्त होता जा रहा है।

महत्वाकांक्षी सरकार भी अपनी महत्वाकांक्षाके कारण अणुशक्तिका संशोधन करके संहारक साधनोंकी अभिवृद्धि कर रही है। प्राचीन समयमें शक्तिकी विद्या यम नियमका पालन करनेवालोंके पास रहा करती थी। राजाका उसपर नियन्त्रण न था। मानवी मनकी उच्चता समृद्ध करनेवाले ऋषि इस शक्तिका पालन किया करते थे। अतः शक्तिका उपयोग विध्वंसनात्मक नहीं होता था।

आजकी परिस्थिति उलटी है। इस समय यदि हम प्राचीन पद्धतिकी उत्तमताको मिलालें तो हमारा कल्याण हो सकता है। भारतीय संस्कृतिमें सन्निहित इस वैशिष्ट्य-की हम उपेक्षा न करें, इसी हेतुसे इसका संक्षिप्त निर्देश इस लेखमें किया है।

[लेखांक १८]

# गुरुकुलीय शिक्षापद्धति

## जनता-मान्य शिक्षा

वर्तमान शिक्षा राजशक्तिकी इच्छासे तथा राजशक्तिके नियन्त्रणसे चल रही है और वैदिक युगकी शिक्षा स्वतन्त्र-रूपेण एवं राज्यशासनके नियन्त्रणसे मुक्त होकर ऋषियों द्वारा प्रचलित थी, यह बात हमने देखी। ऋषियों का उद्देश्य मनुष्यत्वके स्तर को ऊँचा उठाना था। आजकी शिक्षाका उद्देश्य राज्यशासनके लिये अपेक्षित तरुणोंका निर्माण करना है। यह अन्तर बहुत बडा है जो सहज ही ध्यानमें आ सकता है।

राज्योंके अधीन एवं राज्य सत्ताद्वारा चालित आजके विद्यालय हैं तथा कुछ ऐसे हैं जिन्हे शासनकी ओरसे कुछ आर्थिक सहायता मिल जाती है। ये सारे शिक्षणालय राज्यसत्ता द्वारा अनुमोदित होनेपर ही जनताके लिये भी मान्य बनते हैं। यह बात यहाँ ध्यानमें रखना इष्ट है।

## आजके गुरुकुल

आर्यसमाजने किन्हीं गुरुकुलोंका संचालन किया और हिन्दुसमाजने भी किन्हीं ऋषिकुलोंको चलानेका प्रयत्न किया। बनारसमें हिन्दु विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। किन्तु विश्वविद्यालयने अंग्रेजी राज्यकर्ताओंकी ओरसे मान्यता की सनद प्राप्त कर ली थी और आज गुरुकुल भी उसी मार्ग का अनुसरण करते दिखाई पड रहे हैं। गुरु-कुलोंके उत्तीर्ण अनेक स्नातक भी आज भारतीय विश्व विद्यालयोंकी उपाधियाँ प्राप्त करनेके लिये लालायित दिखाई पडते हैं। इसका कारण यह है कि आजकी जनता भी स्वतन्त्र शिक्षा प्राप्त करके स्वतन्त्ररूपसे अपना मार्ग बनाने योग्य स्वतन्त्रता प्रिय नहीं है और वह यह अनुभव भी करती है कि सरकारी मुहरके प्रमाणपत्र के प्राप्त कर लेने पर ही हमारी योग्यता सचमुच बढती है। जनता आज इस स्थिति तक परतन्त्र एवं सरकारतन्त्र बन गई है!!

वैदिककालमें जनता आजके समान परतन्त्र नहीं थी। उस समय उसे राज्यमान्य शिक्षा उत्तम एवं ऋषिमान्य

शिक्षा कम दर्जे की नहीं लगती थी। अपितु इसके विरुद्ध उसकी मान्यता यह थी कि ऋषिमान्य शिक्षा ही हमारा तारण करेगी। यही कारण था कि गुरुकुल अपनी उन्नतिकी चरम सीमापर थे एवं सरकार नियन्त्रित पाठशालाएं नाम-मात्रको भी न थीं।

**वर्तमान युगके गुरुकुलोंकी अवस्था शोचनीय बनती जारही है तथा सरकारी सिक्केवाले प्रशस्ति पत्रोंका सन्मान आज बढता जा रहा है। जनता आज इतनी पङ्गु बन गई है और इसीलिये स्वतन्त्र एवं तेजस्वी शिक्षा देनेवाली संस्थाओंका अभाव भारत मे प्रतिदिन बढता जा रहा है। इस बातसे जनताकी मानसिक अवस्था किस स्थितिपर जा पहुँची है, इसका अनुमान किया जा सकता है।**

हम जिस युगकी शिक्षापद्धतिके विषयमें कह रहे हैं उस कालमें ब्राह्मणोंपर कर नहीं था, शिक्षा-व्यवस्था पूर्णतः ब्राह्मणोंके आधीन थी, गुरुकुल सर्वथा स्वतन्त्र होते थे, शिक्षापर राजाका नियन्त्रण नहीं था। ब्राह्मणका घर शिक्षणालयके समान ही था, सब लोग सहायता देते थे, राजा रक्षा करते थे, किन्तु नियन्त्रण केवल ब्राह्मणोंका ही हुआ करता था और वे शमदम सम्पन्न होनेके कारण गुरुकुलोंका वातावरण पूर्णतः स्वतन्त्र हुआ करता था। गुरुकुलोंमें हजारों विद्यार्थी अध्ययन करते थे; किन्तु फीस नहीं थी। शिक्षा बिनामूल्य प्राप्त होती थी। ऋषियोंके ये आश्रम इतने अधिक सम्पन्न थे।

अन्न वस्त्र, निवास आदि समस्त खर्च गुरुकुलकी ओरसे ही होता था। इस प्रकार समस्त शिक्षा सर्वथा निःशुल्क थी। शिष्य गण प्रतिदिन भिक्षावृत्ति से भोजन प्राप्त करते थे, यह कल्पना पूर्ण असत्य है। आश्रमोंके सहस्रों ब्रह्मचारी यदि प्रतिदिन भिक्षा मांगने जाय तो किसी भी गांवका महीना पन्द्रह दिन में दिवाला निकल सकता है। गुरुकुल के ब्रह्मचारी बाहर तो जाते ही नहीं थे। उनका भोजन वहीं पकता था। आज इनके विषयमें अनेक मिथ्या कल्पनाओंने गजब कर रखा है। यह भी उसीका एक उदाहरण है।

## परिस्थिति और शिक्षा

आज हम देखते हैं कि सुधरी और आगे आई हुई जातिके लडके उच्च शिक्षा प्राप्त करके आगे बढ जाते हैं और पिछडी जातियोंके लडके पीछे रह जाते हैं। ऐसा होनेका कारण घरकी परिस्थिति है। उच्च जातिके घरोंमें उच्च शिक्षा प्राप्त करनेकी सुविधा रहती है; किन्तु पिछडी जातिके घरोंमें वैसी परिस्थिति नहीं रहती। परिणामस्वरूप राष्ट्रके सहस्रों बालक बौद्धिक प्रगतिसे वंचित रह रहे हैं।

आज हम इस परिस्थितिमें कोई भी परिवर्तन करनेमें असमर्थ हैं। यह स्थिति जातीय ऊंचनीचकी भावनाके कारण भारतमें उत्पन्न हुई है और यूरोप तथा अमेरिकामें गरीबी अमीरीके भेदभाव के कारण उत्पन्न हुई है। यह परिस्थिति चाहे जिस कारणसे उत्पन्न हुई हुई हो किन्तु इतना तो सच है कि ऐसा सभी देशोंमें है। शिक्षा अनिवार्य होनेपर भी पिछडी हुई जनताको उसका विशेष लाभ नहीं हो पाता, क्योंकि उनकी घरकी परिस्थिति शिक्षाके लिये अनुकूल नहीं होती। हिन्दुस्तानमें ब्राह्मण, वैश्य आदि शिक्षाके क्षेत्रमें आगे बढे हुए हैं तथा हरिजन कहलानेवालोंके घरकी परिस्थिति शिक्षाक्षेत्रमें आगे बढनेके अनुकूल नहीं है। यही अवस्था यूरोप एवं अमेरिकामें किन्हीं अन्य कारणोंसे है। यह स्थिति अनिवार्य शिक्षा-प्रणालीसे भी सुधरती नहीं दीखती। यूरोपमें शतप्रतिशत जनता शिक्षित है तथापि वहाँ परिस्थितियोंकी यह प्रतिकूलता विद्यमान है ही। बोर्डिङ्गमें सभी छात्रोंके लिये व्यवस्था होनी सम्भव नहीं है और वहाँ भी उच्च परिस्थिति रहती है, ऐसा नहीं कहा जा सकता।

वैदिककालमें ६ ठे या ८ वें वर्ष बालकको गुरुकुलमें पहुँचा दिया जाता था। इस प्रकार बालक को घरके वातावरणसे सर्वथा अलिप्त रखने का प्रयत्न किया जाता था। ८ वें वर्षमें प्रविष्ट हुआ हुआ बालक कमसे कम १२ वर्षों तक तो गुरुकुल में रहता ही था। वह अपनी इच्छानुसार २४, ३६ या ४८ वर्षों तक भी रह सकता था। किन्तु १२ वर्षों तक रहना तो आवश्यक ही था। इन १२ वर्षोंमें वह मातापिताके घर नहीं आता था। उसका लालन पालन एक राष्ट्रपुत्रकी तरह वहाँ हुआ करता था। निम्न स्तरके घरोंके बालक एवं उन्नतम स्थितिके बालकोंको गुरुकुलमें समानरूपसे रखा जाता था और यही नीति उनके पालन पोषण एवं अध्ययनके विषयमें भी बर्ती जाती थी।

गरीब और आश्रयहीन बालकोंकी संरक्षणकर्त्री सरकार रहती थी। संरक्षक-रहित बालक यदि गुरुकुलमें प्रविष्ट हो जाता था तो उसके घरदार और सम्पत्ति की रक्षा राजा करता था, ऐसा उल्लेख मनुस्मृति में मिलता है। इस विधानसे यह स्पष्ट हो जाता है कि अनाथ अथवा आश्रयहीन बालक की शिक्षा-व्यवस्था सरकार द्वारा गुरुकुलोंमें की जाती थी।

यदि श्रीमन्त का बालक हुआ तब भी उसकी सम्पत्ति की रक्षा राजाके द्वारा ही की जाती थी और बालकके गरीब होने पर गुरुकुलोंकी शिक्षा नि.शुल्क होनेके कारण एव बोर्डिङ्गका खर्च आजके समान बहुत बोझिल न होनेके कारण उसे किसी प्रकारकी असुविधा प्रतीत नहीं होती थी। गुरुकुलमें प्रविष्ट हो जानेपर वे वहाँ विद्या देवीके पुत्र और राष्ट्रमाताके ब्रह्मचारी होकर समभावसे समानरूपसे रहा करते थे।

## गुरुकुलस्थ अनुकूलता

गुरुकुलकी परिस्थिति इस प्रकार सर्वोत्कृष्ट हुआ करती थी। वैसी परिस्थिति आज हमारे सुधरे हुए और अग्रगामी घरोंमें भी नहीं मिलेगी फिर पिछडे हुए घरोंमें तो यह सब सम्भव ही कैसे ? इस प्रकारके उच्चतम ज्ञानमय वातावरणमें यदि बालक रह सकें तो उनका कितना लाभ होगा, इसकी कल्पना पाठक कर सकते हैं।

यदि राष्ट्रके समस्त बालक और तरुण इस प्रकारके उच्च एवं ज्ञानपूर्ण वातावरणमें समतासे रहने लग जांय तो राष्ट्रकी नवीन पीढी कैसी (तैयार) होगी इसका विचार पाठक करें। आज घरघर में विषम परिस्थिति है। ऐसी परिस्थितिमें राष्ट्रके युवक होनेके कारण समस्त राष्ट्र में किस प्रकार विषमता बढती जा रही है और पिछडे हुओंकी बुद्धिमत्ता उनके घरोंकी प्रतिकूल परिस्थितिके कारण किस प्रकार कुंठित होती जा रही है इसका विचार पाठक करें तो उन्हें यह विदित हो जाएगा कि राष्ट्रीय दृष्ट्या हमारी कितनी हानि होती जा रही है।

इस अवसरपर यह शङ्का की जा सकती है कि प्राचीन कालमें त्रैवर्णिकोंको ही गुरुकुलमें प्रविष्ट किया जाता था और बाकीके सब लोग पिछडे ही रहते थे। किन्तु इस विषयमें हम इतना उल्लेख कर देना ही पर्याप्त समझते हैं कि प्राचीन समयमें शिक्षा प्राप्त करनेकी जिसे भी इच्छा होती थी उसके लिये कोई प्रतिबन्ध नहीं हुआ करता था। विदुर यद्यपि शूद्र था किन्तु वह भीष्म, द्रोण, धर्म और श्रीकृष्णके समान या थोडा बहुत अधिकही विद्वान था। उसकी 'विदुर नीति' उस समय भी मान्य थी और आज भी मान्य है। ब्रह्मज्ञानमें भी वह अच्छी योग्यता रखता था। इससे यह सिद्ध होता है कि उस समयका शूद्र भी बहुत विद्वान् होता था। शूद्र होनेके कारण किसी को शिक्षासे वंचित नहीं होना पडता था।

## आजीविकाका प्रश्न

इस प्रकार अनेकों श्रेष्ठ एवं विद्वान् शूद्रोंका उल्लेख प्राचीन कालके इतिहासमें प्राप्त होता है। प्रतिबन्ध शिक्षा प्राप्त करनेमें न होकर शिक्षा देनेके विषयमें था। क्योंकि यह प्रश्न आजीविकाका है। उस समय प्रत्येकके लिये कार्य नियत था तथा उसके अनुसार उनकी आजीविका नियत की गई थी। कोई भी चाहे जितना ज्ञानार्जन कर सकता था, इस विषयमें कोई प्रतिबन्ध नहीं था। अध्यापनका कार्य मात्र ब्राह्मणों पर अवलम्बित था; दूसरोंको यह अधिकार प्राप्त नहीं था। शिक्षा प्राप्तिके विषयमें किसीको भी वंचित नहीं रखा जाता था। यही कारण था कि हीनकुलके लोग भी उस युगमें बहुत बडे विद्वान् हो सकते थे।

## एक राजकीय प्रश्न

यहाँ एकलव्यके विषयमें किन्हीं पाठकोंके मनमें शङ्का उत्पन्न हो सकती है; अतः इस बातका स्पष्टीकरण भी आवश्यक है। यह राजकीय प्रश्न है। द्रोणाचार्य कौरवों-द्वारा पोषित आचार्य थे। अतः राज्यकर्ताओं पर आक्रमण करनेवाली जातीके युवकोंके पास श्रेष्ठ कोटिकी युद्ध विद्या न जासके, इस बातका ध्यान रखना उनका कर्तव्य था। एकलव्य राज्यकर्ताओंकी जातीका नहीं था। अतः हस्तिनापुरमें स्थापित किये गये कौरवोंके विश्वविद्यालयमें एकलव्यका प्रवेश न हो सका। जब एकलव्य स्वयं शिक्षित होकर तैयार हुआ तो कौरवोंके विश्वविद्यालयके आचार्योंने उसका अंगूठा कटवा दिया। यह दोष राज्याश्रयसे चलनेवाले विद्यालयका है। हस्तिनापुरका विश्वविद्यालय कोई स्वतन्त्र गुरुकुल नहीं था। वह तो राजा द्वारा प्रचालित एक शिक्षणालय था। वहाँ शत्रुजातीके युवकोंका प्रवेश कैसे सम्भव था ? शत्रुजातीके युवकोंको वहाँके आचार्य शिक्षित रूपमें देख भी किस प्रकार सकते थे ?

किन्तु यह दोष गुरुकुलोंमें नहीं हो सकता था। गुरुकुलोंमें आर्य, देव, दानव और असुर आदि सभी शिक्षा प्राप्त करते थे, यह हम देखते हैं। विरोचन, रावण, बिभीषण ये सबके सब शिक्षित असुर थे। रावणकी माता असुर जातीकी तथा पिता आर्य जातीका था। इस प्रकारकी ये सन्तानें थी। इन्हें उत्तम शिक्षा प्राप्त हुई थी। और एकलव्यको भी वहाँ उत्तम शिक्षा प्राप्त हुई थी।

## राजाश्रित विद्यालयोंके कुछ अत्याचार

उपर्युक्त विवरणसे यह ज्ञात होता है कि एकलव्यपर जो अत्याचार हुआ वह राजाश्रित विद्यालयमें हुआ था। वह गुरुकुलमें नहीं हुआ था, यह ध्यानमें रखना चाहिये। इंग्लेण्डमें सिविल सर्विसकी परीक्षा लेनेके समय भारतीय विद्यार्थियोंके प्रवेशके लिये कितनी हलचल करनी पड़ी? इसीकी तुलनामें एकलव्यका उदाहरण रखनेपर इस समस्याको सहजमें समझा जा सकता है। द्रोणाचार्य कौरवोंके नौकर थे। यदि वे गुरुकुल खोलते तो उन्होंने अपने गुरुकुलमें एकलव्यको लिया ही होता। किन्तु वे तो राज-प्रवर्तित विद्यालयके मुख्याध्यापक थे। अतः उनके लिये यह सम्भव ही न था कि वे एकलव्यको प्रविष्ट करते और उसकी प्रवीणता देखकर उसका अभिनन्दन करते। राजाकी आज्ञा होते ही उत्तर गोग्रहण करनेके लिये उन्हें जाना ही पड़ा। सरकार नियन्त्रित विद्यालय तथा एवं ऋषि संचालित गुरुकुलमें यह अन्तर है। जिनका हमने गत लेखोंमें वर्णन किया है वही बात यहाँ एकलव्यकी आख्यायिकासे सिद्ध हुई है। द्रोणाचार्यका यही दोष था कि सरकार नियन्त्रित विद्यालयके वेतनधारी अध्यापक बने। ऐसे विद्यालयके प्राध्यापक एकबार बन जानेके पश्चात् फिर उस विद्यालयके अनुशासनका पालन करना तो आवश्यक है ही अन्यथा अनुशासन भङ्ग करनेका दोष उनपर आयेगा।

अस्तु। इस लेखमें घरकी विषम परिस्थितिका दुष्परिणाम गुरुकुलीय शिक्षार्थियोंके मनपर नहीं होता था और उन्हें अपनी बुद्धिको पूर्णरूपेण विकसित करनेका अवसर मिला करता था। इस दृष्टिसे गुरुकुलीय पद्धति श्रेष्ठ थी, यह सिद्ध होता है। पिछड़ी जातीके बालक ५० प्रतिशत हैं, ऐसी यदि कल्पना करें तो इतनी बड़ी जन संख्या हमारे देशमें घरकी विषम परिस्थितिके कारण पीछे पड़ी हुई है, यह बात हमारे ध्यानमें आजाएगी। इस कारण अनेकों बुद्धिमान लोग अविकसित स्थितिमें राष्ट्रके लिये भारस्वरूप होकर हमारे देशमें पड़े हुए हैं।

## नवीन सुविधा तथा योजना

यूरोप और अमेरिकामें रात्रिके वर्ग, सुबहके वर्ग, रविवारके वर्ग, स्वयं शिक्षणकी योजना आदि अनेक प्रकारकी योजनायें प्रारम्भ हुई हैं। इन योजनाओंके कारण घरकी परिस्थितिवश विद्यार्थियोंकी होनेवाली हानि अंशतः तो भी दूर हो सकती है। गुरुकुलकी पद्धति यदि यूरोप और अमेरिकामें प्रारम्भ हो जाय तो उन्हें जितना लाभ होगा उतना इन उपायोंसे सम्भव नहीं है। यह बात यद्यपि सत्य है तथापि उन लोगोंने घरकी परिस्थिति प्रतिकूल होनेपर भी हीन स्थितिके लोगोंको ऊपर उठानेके लिये इन योजनाओंके द्वारा अनेक सुखके मार्ग प्रशस्त एवं उन्मुक्त कर दिये हैं, यह निर्विवाद है।

यदि हम गुरुकुलीय शिक्षण पद्धति प्रचलित न कर सकें तो हमें भी अपने देशमें इस प्रकारकी योजनायें प्रारम्भ कर देनी चाहिये। थोड़ा थोड़ा अध्ययन करके प्रौढावस्थामें भी उच्च बननेके उपाय सबके लिये सुलभ हो सके, ऐसे प्रयत्न होने चाहिये।

'गुरुकुलों' की स्थापना कोई साधारण कार्य नहीं है। आर्यसमाजने इस विषयमें बहुतसे स्तुत्य प्रयत्न किये हैं, किन्तु गत ५० वर्षोंका निष्कर्ष यह दिखाई पड़ता है कि गुरुकुलोंको चलानेके लिये जैसा सरक्षक एवं अध्यापकवर्ग अपेक्षित था वैसा आज नहीं मिल रहा है। कुछ भी हो, इस विषयमें यहाँ बहुत कुछ लिखा जा सकता है, किन्तु उसकी उतनी आवश्यकता नहीं है। इतना अवश्य है कि गुरुकुलोंको व्यवस्थित रूपसे, संचालित करनेयोग्य व्यक्ति हमारे पास नहीं हैं। हमारा सामाजिक स्तर आज इतना गिर चुका है।

यूरोप और अमेरिकामें ऐसे कार्योंके लिये जैसे चाहें वैसे स्त्रीपुरुष आज आस्थासे और श्रद्धासे काम करनेवाले, मिल सकते हैं। अर्थात् इस विषयमें हमारे समाजकी अपेक्षा उनका समाज अधिक प्रगतिशील प्रतीत होता है।

इस लेखमें यह दिखाया गया है कि घरकी प्रतिकूल परिस्थितिके कारण शिक्षा प्राप्त नहीं की जा सकती; इस कारण हमारे समाजमें पिछड़ापन बहुत है और राष्ट्रीय दृष्टिसे वह बहुत हानिकारक है। गुरुकुल शिक्षापद्धतिके अन्तर्गत सब बालक समानरूपसे एक उच्च वातावरणमें रखे जाते थे और इसीलिये यह बात राष्ट्रीय दृष्टिसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इस दिशामें आज हम कुछ कर सकते हैं अथवा नहीं, इनका विचार पाठक करें। वैदिककालके बालक हमारी अपेक्षा अधिक भाग्यशाली थे, ऐसा प्रतीत होता है। यदि हम आज भी संकल्प करें तो हमें मार्ग मिल सकता है; किन्तु उतना दृढ निश्चय चाहिये।

# केन्द्रव्यवस्थापकोंसे निवेदन

६-७ सितम्बर ५२ ई की संस्कृत भाषा प्रचार परीक्षाओंके लिये जिन केन्द्रोंसे आवेदन पत्र प्राप्त हुए हैं उन्हें प्राप्ति-सूचना उत्तर पुस्तकें, उपस्थितिपत्रक, केन्द्रखर्च विवरण, निरीक्षक नियुक्ति पत्र इत्यादि सामग्री भेजी जा चुकी है। इस सब सामग्रीकी पहुँचकी सूचना वे शीघ्र भेजें। संस्कृत भाषा प्रचारके इस महान कार्यमें इस सहयोगके लिये धन्यवाद।

केन्द्रव्यवस्थापक महानुभावोंसे निवेदन है कि परीक्षा व्यवस्थाको सुदृढ बनानेके लिये कृपया नीचे लिखी बातोंपर **विशेष** ध्यान दें:—

**निरीक्षक-नियुक्ति**-- १ अपने केन्द्रके निरीक्षक कार्यके लिये प्रति ३५ परीक्षार्थियोंपर एक निरीक्षकके हिसाबसे आवश्यक संख्यामें निरीक्षकोंकी नियुक्ति कर लें।

२- नियुक्त निरीक्षकोंके नाम, पता, योग्यता, आयु, व्यवसाय आदिके उल्लेखके साथ उनकी स्वीकृति भी यथाशीघ्र '**निरीक्षक स्वीकृति पत्र**' के निचले हिस्सेमें भरवाकर पारडी भिजवा देनी चाहिये।

३- प्रारम्भिणीके अतिरिक्त प्रवेशिका, परिचय एवं विशारदके छात्रोंकी संख्या यदि प्रतिपरीक्षा-पांचसे न्यून होगी तो उनके लिये निरीक्षक सम्बन्धि व्ययका भार स्थानीय केन्द्र द्वारा ही वहन करनेकी अपेक्षा की जायेगी।

४- जहाँ ३५ से कम परीक्षार्थी होंगे वहाँ भी एक निरीक्षककी नियुक्ति की जा सकती है।

५- निरीक्षकको प्रति बैठक ( एक बैठक तीन घण्टेकी होती है ) के लिये सवा रुपया पुरस्कार दिया जाता है।

६- **उत्तरपुस्तकें**— शनिवार और रविवारको प्रत्येक परीक्षाके निरीक्षकके हस्ताक्षरके साथ, सम्बन्धित परीक्षाकी उत्तर पुस्तकोंका बण्डल सील करके रख लेवें। ऐसे सील किये हुए चारों बण्डल सोमवारकोही रजिस्ट्री द्वारा एक साथ भेज दें।

७- उत्तर पुस्तकोंके बण्डलोंपर चिपकानेके लिये भेजा गया लेबल निरीक्षकोंके हस्ताक्षर सहित बण्डलपर चिपकाना न भूलें।

८- बची हुई उत्तर पुस्तकें, पुरवणी पत्रक एवं प्रश्नपत्र उत्तर पुस्तकोंके साथही भेज दें।

९- **उपस्थिति पत्र** उत्तर पुस्तकोंके साथही अवश्य भेजें।

## परीक्षा व्यवस्थाखर्च

परीक्षा समयमें होनेवाले खर्चेका विवरण आवश्यक वाउचर सहित '**केन्द्र व्यवस्थाखर्च विवरण**' पर भरकर शीघ्राति-शीघ्र भेजें।

**सूचना**- यह विवरण भरते समय स्मरण रखें कि निम्नाङ्कित खर्च ही 'परीक्षा समयमें होनेवाला खर्च माना जाएगा।

( १ ) परीक्षानिरीक्षकोंका पुरस्कार।

( २ ) उत्तर पुस्तकें रजिस्ट्रीसे भेजनेका खर्च।

( ३ ) परीक्षाके दो दिनोंके अन्दर अन्य आवश्यक डाक खर्च।

( ४ ) समयपर उत्तर-पुस्तकें, स्याहीसोक आदि न मिलनेपर उनकी व्यवस्था करनेमें किया गया खर्च।

**परीक्षामन्त्री**

# परीक्षा फल

६-७ सितंबर ५२ ई. की संस्कृत भाषा प्रचार परीक्षाओंका फल **ता० १५ अक्टूबर** बुधवारको केन्द्रोंमें प्रकाशित होगा। प्रत्येक केन्द्रमें उस केन्द्रका परीक्षाफल केन्द्रव्यवस्थापकके पास प्रकाशनार्थ भेजा जाएगा।

**प्राप्ताङ्क सूची**— जो उत्तीर्ण परीक्षार्थी अपने अलग अलग प्रश्न पत्रोंके प्राप्ताङ्क मंगाना चाहेंगे उन्हें चार आने शुल्क भेजना होगा। अनुत्तीर्ण परीक्षार्थियोंसे भी शुल्क लिया जाएगा।

**उत्तीर्ण होनेके अङ्क**— प्रारम्भिणी एवं प्रवेशिकाके लिये ३३ प्रतिशत अङ्क, परिचय परीक्षामें उत्तीर्ण होनेके लिये परीक्षार्थियोंके तीनों प्रश्नपत्रोंके योगमें कमसे कम ३५ प्रतिशत अङ्क प्राप्त करने होंगे। विशारद परीक्षाके परीक्षार्थियोंको उत्तीर्ण होनेके लिये चारों प्रश्नपत्रोंके योगमें कमसेकम ४० प्रतिशत अङ्क प्राप्त करने होंगे; किन्तु प्रत्येक प्रश्नपत्रमें कमसे कम २० अङ्क प्राप्त करना अनिवार्य होगा।

**श्रेणी**— जो परीक्षार्थी कमसे कम सैकडेमें ६० और उससे अधिक अङ्क पायेंगे वे प्रथम श्रेणीमें, ४६ से ५९ तकके द्वितीय श्रेणीमें और शेष तृतीय श्रेणीमें माने जायेंगे। ७५ या इससे अधिक अङ्क पानेवाले विशेष योग्यतावाले समझे जायेंगे।

# राम राज्य

: लेखक :

वसिष्ठ

आज सब ओरसे रामराज्य की मांग है। गहराईमें जानेसे, अपने हृदयोंको टटोलनेपर हमें पता लगता है कि हममें से इने-गिने व्यक्ति ऐसे हैं जो किसी खास प्रकारके "रामराज्य" की कामना करते हैं, शेष अपने मनकी धारणाके राज्यकी कामना करके उस अपने मनोनीत राज्यको "रामराज्य" कहते हैं।

मानव आयतनमें अवतीर्ण होकर उस युगमें-जिसकी तुलना हम आजके युगसे कदापि नहीं कर सकते— रामने मानवताके लिए कुछ मर्यादाएं बांधीं; ऐसी मर्यादाएं, जिनको चरितार्थ करनेके लिए हम अपने अन्तःस्थित "राम" से सचेतन होकर साधन रूपमें सब कृत्योंका स्वागत कर सकें। कार्यसे कारणका पता लगानेकी प्रवृत्ति संकुचित व भ्रान्त है। डाक्टर एक स्त्रीका हाथ काटता है, चोर किसी दूसरी स्त्रीका, दोनोंका कार्य समान है "हाथ काटना"। पर दोनोंके कारण भिन्न हैं। चोर लोभकी ओर उद्घाटित है, लोभवृत्तिने चोरको कारण बना कर प्रेरित किया है जब कि डाक्टर चिकित्सा-भावसे ऐसा करनेको उद्यत हुआ है। डाक्टर वधिक नहीं होता, छुरियाँ भोंकना, नश्तर मारना उसके जीवनका लक्ष्य भी नहीं है। लक्ष्य है मानव-शरीरको निरामय करना और इस लक्ष्यको सिद्ध करनेके लिए वह विषके इन्जेक्शन भी देता है, छुरियाँ भी भोंकता है, नश्तर भी मारता है। उसके इन सब कृत्योंसे रोगी-को बड़ा कष्ट भोगना पड़ता है लेकिन डाक्टर ये सब कृत्य करता है तथा शल्य-कर्मकी पीड़ासे तड़पनेवाले रोगीसे दक्षिणा पाता है, उस व्यक्तिसे दक्षिणा पाता है, जिसका उसने हाथ काट डाला है, आंख निकाल ली है। इन सब बातोंको जानते हुए भी हम अपने आपको कुछ ऐसी अनम्य, कठोर तथा कट्टर धारणाओंमें बांध लेते हैं जिनका टूटना या हमारे लिए तोड़ना असम्भवसा हो जाता है तथा उन धारणाओंको हम परम सत्य एवं उनको धारण करनेके कारण अपने आपको परम पवित्र मानने लग जाते हैं मानो सब कुछको परखनेकी सर्व श्रेष्ठ कसौटी वे हमारी धारणाएं ही हैं। हम भगवानकी, अन्तःस्थित रामकी अन्तःप्रेरणा चाहते है किन्तु शर्त यह लगाते हैं कि उस 'राम" की अन्तःप्रेरणा हमारी धारणासे बालभर भी इतस्तत न हो। हमें न "राम" की पहचान है न "रावण" की, न भगवान की, न असुर की।

मनुष्य हर अवस्थामें परोक्ष शक्तियोंके हाथकी कठ-पुतली है। वे शक्तियाँ दैव और असुर हैं, शुभ या अशुभ हैं, आलोकित या अन्धकारमयी हैं। जब कोई किसीके द्वारा ठगा जाता है तो लोकभाषामें उसे "भोला" कहते हैं। हम "भोले" शब्दका अर्थ करते हैं साधु, सज्जन जब कि उसका ठीक अर्थ, है मूर्ख, अदूरदर्शी, अनु-भवहीन। दुष्ट जब किसी को कुमन्त्रणा देता है तो वह उसके स्वभाव, मनोवृत्तिके अन्तर्गत ही कुमन्त्रणाको चतुर भाषामें लाकर सफलता प्राप्त करता है। मन्थराने जो कुमन्त्रणा दी उसमें हितकर युक्तियोंका प्राबल्य व प्रचुरता थी। उसकी कुमन्त्रणा कितनी ही प्रबल थी और वह कैसी ही अकाट्य युक्तियोंके द्वारा उपस्थित की गई थी किन्तु उस कुमन्त्रणाको स्वीकार करना न करना कैकई पर निर्भर करता था। महारानी, अयोध्याकी सर्वेसर्वा कैकई थी मगर वह थी मंथराके हाथकी कठपुतली। नाम कैकईका था पर नचानेवाली मन्थरा थी। तो, अयोध्याके भाग्य-की, सुख-दुःखकी बागडोर उस कैकई हाथमें थी जो मन्थरा द्वारा नचाई जाती थी। जबतक अयोध्याके भाग्य-विधाता ऐसे व्यक्ति होंगे — चाहे वे कैकई हों या दशरथ-- जो मन्थराके इशारे पर नाचते हों, मन्थराकी मन्त्रणासे ही सब कुछ करते-- धरते हों तबतक अयोध्याके राज्यकी

बागडोर 'राम' के हाथमें नहीं मन्थराके हाथमें है और रहेगी।

हमारे देशमें "रामराज्य" कैसे हो, इस प्रश्न पर विचार करनेसे पहले यह जनना जरूरी है कि हमारे देशका धन और आधिपत्य जिन लोगोंके हाथमें है, वे किन सूक्ष्म शक्तियों, प्रवृत्तियोंके हाथकी कठपुतली हैं, रामके या मन्थरा के? प्रत्येक धनवान "रामराज्य" चाहता है किन्तु वह जो धन कमाता है तथा व्यय करता है, वह रामकी अन्तःप्रेरणासे या मन्थराकी अन्तःप्रेरणासे? जिन लोगोंके हाथमें आधिपत्य, अधिकार है वे रामकी अन्तःप्रेरणाके अनुसार अपने अधिकारका उपयोग करते हैं या मन्थराकी अन्त प्रेरणाके अनुसार? यदि धन और आधिपत्यके अधिष्ठाता मन्थरा या रावणकी अन्तःप्रेरणाके अनुसार धन और अधिकारका उपयोग करें तो "रामराज्य" की कल्पना व्यर्थ है, सम्भावना असम्भव है। जिसे दस आदमी "रामराज्य" कह दें या जिसे कोई तत्कालीन तथाकथित सन्त "रामराज्य" कह दे, वही "रामराज्य" है, ऐसा नहीं हो सकता, यद्यपि हरयुगमें कोई-न-कोई व्यक्ति महापुरुष माना ही जाता है चाहे वह "महापुरुषता" पाशविक शक्तिके बलपर डिक्टेटरी द्वारा हो या जनताकी भ्रान्तधारणा एवं अन्धश्रद्धाके कारण; सत्य सदा ही सत्य है चाहे उसको माननेवाला एक व्यक्ति हो या असंख्य। यदि बहुमत मिथ्या पक्षकी ओर हो तो मिथ्या सत्य नहीं बन जाता; बहुमतने जो निश्चय कर दिया, वही सत्य है और वही "रामराज्य" है, ऐसा न कभी हुआ न होगा; बहुमतका अर्थ है "वाक् चातुरीसे बनाई गई डिक्टेटरी"; सत्यका अनुयायी यदि एक व्यक्ति भी न हो, तो भी सत्य सदैव सत्य रहेगा।

अतः "रामराज्य", सत्यका राज्य चाहनेके लिए धनवान् और अधिष्ठाताको अन्तर्यामी "राम" की अन्तःप्रेरणाके अनुसार चलना होगा न कि अपनी तपी-तुली धारणाके अनुसार या जिस-तिसकी शुभ प्रतीत होनेवाली मन्त्रणाके अनुसार। जबतक जर्मनीकी सम्पत्ति, अधिकार, सेना व प्रजा हिटलरके आदेशानुसार काममें लाई गई तब तक जर्मनीमें हिटलरका राज्य था, रामका नहीं। हमारे अपने देशका धन, सम्पत्ति, कल-कारखाने, उद्योग-धन्धे, जमीदारी व राज्यकी बागडोर जिन मनुष्योंके हाथमें है, वे किन शक्तियोंके द्वारा अन्तःप्रेरित हो रहे हैं, सब इस बात पर निर्भर करता है।

यदि धनवान् अपने धनका एक-एक पैसा अन्तःस्थित "राम" की, न कि जिस-तिसकी प्रवृत्तिकी प्रेरणाके अनुसार व्यय कर रहा है; यदि कल-कारखानेवाले, उद्योगपति, व्यापारी, जमींदारादि सब अपने धनको "राम" की प्रेरणाके अनुसार व्यय कर रहे हैं, शासक वर्ग "राम" की अन्तःप्रेरणाके अनुसार राजकार्य कर रहा है, राजस्वका व्यय "राम" की अन्तःप्रेरणाके द्वारा हो रहा है तो "राम-राज्य" हमारे देशमें सर्वत्र व्यापक है ही। चोरबाजारी, छल-झूठ, दुराचार, अस्वास्थ्यकर गंदी चीजोंका खाद्यान्नोंमें मिश्रण, मंहगाई, भ्रष्टाचार, देशका विभाजन, दुर्भिक्ष, असंतोष, सर्वत्र हाहाकार, सभी "रामराज्य" के चमत्कार हैं। और यदि ये सब बातें "रामराज्य" से भिन्न हैं तो समझना चाहिये कि हम सब वही कर रहे हैं जो सूक्ष्म रावणकी कुप्रवृत्तियां हमें कुमन्त्रणा दें रही हैं। रामके पास न कोई जनशून्य उर्वर देश है न अतुल सम्पत्ति व सहस्रों मन सुवर्णका भण्डार और न ही अणुबम जैसे घातक अस्त्रों से सुसज्जित लाखों सैनिकोंसे भरपूर कोई सेना कि वे अपने जन-शून्य देशमें "रामराज्य" की छत्र-छायामें रहनेके लिए उत्सुक लोगोंको आमन्त्रित कर सकें या सुवर्ण के द्वारा देश देशान्तरको क्रय करलें या हिटलरकी तरह सर्वत्र आक्रमण करके अपना डिक्टेटरी "रामराज्य" स्थापित कर दें क्योंकि उन्होंने समस्त देश और सम्पत्ति उन मानवोंको धरोहरमें देदी है, जो स्वतन्त्र हैं। भगवान-की अन्तःप्रेरणाके अनुसार "रामराज्य" स्थापित करनेको या असुरकी अन्तःप्रेरणाके अनुसार चलकर "रावण" का राज्य स्थापित करनेको। और यदि यह हो भी जाय कि "राम" किसी जन-शून्य देशमें हमें बसाने लगें तो आखिर हम भी तो कुछ हैं ही। "राम" के जन-शून्य देशमें बसकर, उस नूतन उपनिवेशको "रामराज्य" के नामसे प्रख्यात करनेवाले हम अयोध्यावासी भी तो स्वतन्त्र होंगे धोबीकी कुमन्त्रणा स्वीकार करनेको। कुमन्त्रणाएँ, कुप्रवृत्तियाँ तो हमें गिद्ध, चील व मक्खियोंकी तरह हर समय घेरे रहेंगी। अन्ततोगत्वा इन्हीं प्रेरणाओंको हम शिव-

संकल्प मानेंगे और कुछ ही दिनोंमें "राम" के नूतन उपनिवेशको "रावण" का दुर्गम दुर्ग बना डालेंगे।

धन और आधिपत्य भौतिक जगतमें दो महान् शक्तियां हैं। एक करोड़पति अपनी पूँजीसे हजारों मनुष्योंको निर्वाह, सुख-सुविधा देकर दिव्य, या अदिव्य, शुभ वा अशुभ यहाँतक कि राक्षसी और पैशाचिक कार्य कर सकता है, करा सकता है। यह सब पूँजीपतिपर--चाहे वह जमींदार हो, राजा हो, उद्योगपति या विख्यात व्यापारी--निर्भर करता है कि वह अपने धनको, धन शक्तिको किन प्रवृत्तियों, शक्तियोंके सुझावपर व्यय करता है, उपयोगमें लाता है, "राम" की दिव्य शक्तियोंके सुझावके अनुसार या "रावण" की आसुरी शक्तियोंके सुझावके अनुसार।

जिसने धन उपार्जन किया है साधारणतः, नैतिक न्याय की साधारण परिपाटीके अनुसार वह धन उसका ही है किन्तु यदि वह व्यक्ति अपने धनको ऐसे कार्योंमें व ऐसी प्रक्रियामें व्यय करता है जिससे भारत--संघको हानि और पाकिस्तानको भारत-संघकी सीमामें षड्यन्त्रकी सफलता मिले तब भारत-संघ-सरकार ऐसे व्यक्तिके सब धनको--जिसका कि वह न्यायतः स्वामी है— बलात् छीन सकती है या छीन लेती है, उस धनको छीन लेती है जो भारत--सरकारका नहीं; उस धनको छीन लेती है जिसे धनपतिने परिश्रम व ईमानदारीसे कमाया था, तब "रामराज्य" को चाहनेवाली जनता ऐसे व्यक्तियों, समुदायों यहांतक कि रजवाड़ों व सरकारोंतकको क्यों स्वीकार करेगी जो "राम" के स्थानमें आसुरी शक्तियोंकी कुमन्त्रणाकी कठपुतली बने हैं। इसलिये जिस देशके धनवान्, सत्ताधारी शासक और अधिपति अज्ञान, अन्धकारकी ससीम, संकुचित शक्तियोंकी प्रेरणा व सुझावके प्रति उद्घाटित हैं, उस देशकी धन-राशि, आधिपत्य सब संकीर्ण, ससीम अज्ञानके सुझावोंपर व्यय होंगे। आसुरी संकल्पकी पूर्तिमें व्यय होंगे और वहां असुरकी अन्तःप्रेरणाका बोलबाला होगा न कि "राम" की अन्तःप्रेरणाका।

भगवानकी सन्तान, प्रजा ही— जिसका आज धातु-पाठ है "जनता"— वह निकेतन, घर या यन्त्र है जिसका उपयोग दैव या आसुरी प्रवृत्तियां करण रूपमें करती हैं। सत्य या मिथ्या, प्रकाश या अन्धकार, शुभ या अशुभ, भगवान या असुरने इस मनुष्यको ही निकेतन बना कर निवास करना है, यान्त्रि होकर यन्त्र रूपमें उपयोग करना है। यदि सत्ताधारी, सम्पत्ति-शाली व अधिपतिने अपने आपको व अपने सामर्थ्यको निकेतन रूपमें असुरको दे दिया है; जनताने अपने आपको सत्ता सत्व-विरोधी जड़वादी कम्यूनिस्टको दे दिया है तो यन्त्रोंपर, मानव-सत्ताओंपर अधिकार असुरोंका होगा "राम" का नहीं चाहे वे मन्त्री आपसमें विरोधी हों या अनुकूल। जब भगवान "राम" को न धनवान् उपलब्ध हो सकेगा न अधिपति न जनता तब किसपर वे अपना "रामराज्य" स्थापित करेंगे? "रामराज्य" चाहनेवालोंने भी जब अपनी गतिविधि रावणके, असुरके सुझावपर निर्भर कर दी हो तब भगवान् "राम" रौद्र-रूप-रेखामें पूंजीवादी और कम्यूनिस्ट दो महा असुरोंको लड़ाकर लंका-दहन तो करा सकते हैं— जैसा कि वे कर रहे हैं— "रामराज्य" की स्थापना नहीं करा सकते। हममेंसे कौन है जो अपने सामर्थ्य, सम्पत्ति आदिको, अपने सर्वस्वको बिना किसी शर्तके "राम" के विधानपर न्योछावर करनेको कटिबद्ध हो?

एक युग गुजर चुका है, जिसमें यन्त्रीने यन्त्रको, निवासीने निकेतनको मायावाद कहकर इस प्रकृतिका तिरस्कार व बहिष्कार किया और वह महान् यन्त्रवाला महान् यन्त्री भारतका आत्मा जीर्ण शीर्ण कुटियाका कंगाल बन गया। भारतकी इस कंगालीसे सजग एवं खिन्न होकर आज पश्चिमने दृष्टिगोचर जीर्ण-शीर्ण कुटियाको अजेय राजप्रासाद बनानेके लिए अदृश्य यन्त्रीको, निकेतनके निवासीको मायावाद कहकर अस्वीकार करना आरम्भ कर दिया है ताकि वह निवासीके मायावादसे मुक्त होकर जीर्ण-शीर्ण कुटियाको राजप्रासाद बना सके। किन्तु वह राज प्रासाद किसके लिए? एक विकसन-शील निवासी, एक शिक्षण-शील यन्त्री, एक विवर्तन-शील (evolving) आत्माकी अस्तित्व-प्रतिष्ठाके बिना केवल जिस-तिसको करण बनाकर उपयोगमें लानेवाली एक आसुरी प्रवृत्तिके लिए वह राजप्रासाद भूतोंका डेरा होगा, अमृतके पुत्र किसी भद्र राजकुमारका शान्ति निकेतन नहीं। कुटियाका निवासी कुटियाको माया मानकर कंगाल हुआ था किन्तु राजप्रासादका निवासी अपनेको ईंट-पत्थरका विकार मानकर ईंट-पत्थरसे

भी गया-बीता बनने जा रहा है। जीर्ण-शीर्ण करुण कुटिया राजप्रासादकी रूपरेखामें वधिकशाला बनाई जा रही है और हम मनसूबे बाँध रहे हैं इस वधिकशालासे अयोध्याके "रामराज्य" की झांकी लेनेके।

महापण्डित रावणकी तरह अन्तरात्मामें अपरिपक्व, प्रकृतिमें आवर्तित ( Involved ), आसुरी प्रवृत्तियोंकी ओर उद्घाटित शम्बूक राजाने शक्तियोंके प्रभुत्वके लिए यज्ञ, तप और साधना की। उसमें छिपी हुई दुर्बलता आसुरी शक्तियोंकी उपासिका बनकर तथा उसकी अशक्तता अन्धशक्तियोंका आखेट बनकर साधुताकी रूपरेखामें अपने इष्ट असुरके संकल्पको चरितार्थ करनेके लिए मानवतामें भागवत संकल्पके विकासको रोक देंगी, गुह्यदृष्टि (Occult Vision) से यह सब देखकर रामने शम्बूक राजाके यज्ञ, तप और साधनाको जहां-का-तहां स्थगित कर दिया। गुह्य ज्ञान, सूक्ष्म दृष्टिसे वञ्चित आजके धुरन्धर मेधावी- जो केवल चर्म-चक्षुसे ही किसी वस्तुके केवल पार्थिव रूपको ही देख सकते हैं- परात्पर पुरुषोत्तम रामके इस रहस्यको नहीं समझ सकते और इसीलिए वे आज भावी सम्भावनाओंकी, होतव्यताकी, भावी सत्य संकल्पकी उपेक्षा करके, केवल अदूरदर्शी जनताके बहुमतको प्रसन्न करके अपने नन्हेंसे व्यक्तित्वके निमित्त साधुवाद बटोरनेके लिए नाजीवादसे भी भयंकर खतरेको मानव जातिके भावी संहारके लिए सरसब्ज कर रहे हैं और फिर अभिलाषा कर रहे हैं "रामराज्य" की। गुह्यज्ञान ( Occultism ) की उपेक्षा करनेवाले आजके मेधावी एकलव्यको शिक्षा न देनेवाले द्रोणाचार्यकी आलोचना कर सकते हैं किन्तु तत्कालीन राजनीतिकी रूपरेखाके अनुसार एकलव्यकी विनयशीलता व भक्तिसे द्रवित होकर उस अपात्रको धनुर्धारी बना देना वैसा ही भयानक हो सकता था जैसा कि कासिम रजवी या मद्रास प्रान्तके किसी विनयशील कम्यूनिष्ट आतंकवादीको अणुबम बनानेकी शिक्षा देना। किसी राष्ट्रकी राजनीति की समष्टिमें किसी व्यक्ति विशेषके प्रदर्शन-शील सौजन्यका कोई खास मूल्य नहीं हो सकता। स्वयं श्रीकृष्णने दम्भ और दर्पसे विषाक्त बनी हुई राजकुलोंकी संवर्षकारिणी अभेद्य शक्तिको मिटानेके लिए- जिससे चक्रवर्ती-राज्य-लोलुपताकी स्पर्धा नष्ट-भ्रष्ट हो जाए— खाण्डव दाहके वीभत्स व्यापारसे श्री गणेश किया था। जो कुफ्र उतारता है, तूफान बर्पा कर देता है वह काफिर है, शैतान है, आसुरी शक्तियोंका करण है; जो अध्यात्ममें अनवर्तित ( Unevolved ) है, जिसकी अन्तः चेतना अविद्यामें, अज्ञानमें आवर्तित ( Involved ) है, वह आत्म-अशक्त अज्ञानकी, अविद्या की आसुरी शक्तियोंके चंगुलमें हैं, वह सत्ताके प्रगति-शील विवर्तन (Evolution) के मार्गमें कण्टक है और वही शूद्र है, चाहे वह ऋषि पौलस्त्यका पौत्र महापण्डित रावण हो या श्रीकृष्णका मामा क्षत्रिय राजा कंस या रामायण कालीन शूद्र राजा शम्बूक। ऐसे व्यक्ति कोई भी क्यों न हों, वे जितने ही बुद्धिमें कुशल और पाण्डित्यमें प्रवीण होंगे उतने ही असुरके लिए उपयोगी होंगे, आसुरी शक्तियां ऐसे ही व्यक्तियोंको उनके शक्ति-सामर्थ्यके अनुसार अपना करण बनाकर नाना प्रकारके वाद उपस्थित किया करती हैं और हम गुह्य ज्ञान ( Occultism ) से अनभिज्ञ होनेके कारण उन "वादों" के पीछे रहने वाली व उनको प्रगति देनेवाली सूक्ष्म अन्ध शक्तियोंसे अनभिज्ञ रहते हैं जब कि प्राचीन कालके राजनैतिक गुह्यज्ञानी ( occultists ) इन सब बातोंको देख कर भविष्यका निर्णय किया करते थे। यदि आजके राजनीतिज्ञ सूक्ष्म शक्तियोंके गुह्यदर्शी होते या वे अपनी गतिविधिका पथ-प्रदर्शन किसी सूक्ष्मदर्शीके अनुभवके द्वारा कराते तो उन्हें हिटलरके शक्ति-सम्पन्न बननेसे बहुत पहले उसके सम्बन्धमें वही निर्णय कर लेना पड़ता जो मर्यादा पुरुषोत्तम रामने शम्बूकके लिए और द्रोणाचार्यने एकलव्यके लिए किया था। आज हम प्राचीन कालकी अलंकार युक्त काव्यमयी भाषाका आधुनिक शैलीसे अर्थ लगाकर मर्यादा पुरुषोत्तम रामकी व गुरु द्रोणाचार्यकी आलोचना कर सकते हैं। जीवनकी शैली भले ही भिन्न हो— जो युग-युगमें सदा ही देश, काल, पात्रकी भूमिकामें भिन्न हुआ करती है- पर कासिम रजवी, जब वह नक्सिगढमें पढता था विनयशीलतामें एकलव्यसे कम न था तथा हिटलर तपस्या, सात्विक आहार, विनयशीलता, ब्रह्मचर्य, शिष्टाचार तथा इष्टदेवके प्रति शरणागति व समर्पणमें शम्बूक एवं एकलव्यसे कहीं बढ-चढ कर था और हम भी उसके 'स्वस्तिक' प्रतीक व "आर्य" उपाधिके कारण उसे हिन्दु संस्कृतिका

उद्धारक, आर्यत्वका संस्थापक मानने लग गये थे जब कि अतीत कालमें सूक्ष्मदर्शी ( Occultist ) के निर्णयपर चलनेवाली प्रजा महापण्डित, शिखासूत्रधारी, वैदिक कर्मकाण्डी, महादेव-भक्त, तपस्वी, द्विज दशाननको राक्षस ही मानती थी। और यदि कहीं मर्यादा पुरुषोत्तम रामने शम्बूकको तथा द्रोणाचार्य ने एकलव्यको हिटलरकी तरह शक्ति सम्पन्न बन जाने दिया होता तो उन्हें भी अपने युगमें उन्हीं कठिनाइयों और विपत्तियोंमेंसे गुजरना पड़ता जिन विपत्तियोंमेंसे आजके राजनैतिक नेता हिटलरकी मार खाकर गुजर रहे हैं। अतीतके सूक्ष्मदर्शी ( Occultists ) शक्ति-सम्पन्न रावण, दुर्योधन, कंस, बलि जैसे अध्यात्म-अक्षम राजाओंको मिटानेकी तथा शम्बूक व एकलव्य जैसे आध्यात्म अक्षम व्यक्तियोंको शक्ति व सामर्थ्य उपलब्ध करनेसे वंचित करनेकी योजना बनाते थे। और आजके अदूरदर्शी राजनीतिज्ञ अपने राष्ट्रके धनलोलुप व्यापारियोंको केवल क्षणिक लाभ पहुंचानेके लिए हिटलर, स्टालिन व माव जैसे व्यक्तियोंको शक्ति-शाली बननेमें सहयोग दे रहे हैं तथा मानवताके लिए इनके द्वारा लाई जानेवाली विपत्तिकी ओर दृष्टिपात नहीं करते। हम "रामराज्य" के अभिलाषी होकर उन शक्तिशाली डिक्टेटरोंकी शक्ति और प्रभुत्वको बढ़ा रहे हैं जिनका लक्ष्य है मर्यादा पुरुषोत्तम रामकी मर्यादाओंको मिटाना, मरणासन्न पूंजीवादको मिटाना उनका लक्ष्य नहीं है, बल्कि ऐसी घोषणा करना उनकी छद्म साधुताका, जन-हित-मरीचिकाका ट्रेड मार्क है।

केवल नर तन धारण कर लेने मात्रसे ही कोई मानव-प्राणी जीव-जगतके उच्चतम जीवनका अधिकारी नहीं हो जाता। वह नर देहमें रहकर भी नर पशु हो सकता है जब कि प्राणी नर-देहसे इतर पशु-आयतनमें रहते हुए भी उससे कहीं उपयोगी और स्नेहमय जीवनको चारितार्थ करते रहते हैं। वेद और उपनिषदकी भाषामें तो वही द्विज है जिसका अन्तःजागरण हो चुका है और तान्त्रिकों की भाषामें तो वह नर-तनधारी—जिसकी कुण्डलिनि-शक्ति जाग्रत नहीं है— शूद्रसे भी हीनतर नर-पशु ही है भले ही वह बर्बर जीवनकी तुलामेंके मानदण्ड पर कुबेरके समान धनाढ्य, हिटलरके समान साम्राज्योंका विजेता या विश्व-विख्यात विद्वान, मेधावी भी क्यों न हो क्योंकि वह हृदयमें संकीर्ण, आवर्तित और आसुरी प्रवृत्तिकी ओर उन्मुख है क्योंकि इन्द्रियोंके विषयोंके द्वारा जो हंकाया जाता है वह नरपशु ही है, इन्द्रियां प्राणीकी पशु हैं, किन्तु जो इन्द्रियोंका चालक है वह पशु-पाल, गोपाल है, वही द्विज है और वही यथार्थमें मनीषि, मनुष्य है। किन्तु जो चर्म-चक्षुकी पशुदृष्टिको ही कसौटी मानते हैं वे महल और मन्दिरकी आकृतिवाले मकानमें रहनेवालेको प्रजा-पालक राजा व सर्वमित्र सन्त ही समझते हैं, उन्हें यह सूझता ही नहीं कि महल और मन्दिरमें पशु भी घुस सकते हैं; यहांतक कि सिंह और वृकके घुस बैठने पर भी चर्म-चक्षुके दृष्टिकोण से महल और मन्दिरकी आकृतिमें भेद नहीं आता; अतः नर-तनधारी मात्रमें मानवताकी प्रतिष्ठा करनेवाले चर्म-चक्षु केवल पशुनेत्र ही हैं।

केवल चर्म-चक्षुसे देख सकनेवाले पुलिसके गुप्तचर भी जब किसी गुप्त षड्यन्त्रका रहस्योद्घाटन करते हैं तो उन षड्यन्त्रकारियोंको षड्यन्त्र करनेसे पहले षड्-यन्त्रकी योजना मात्रपर कठोर दण्ड दिया जाता है,-शरीर नीरोग है किन्तु उपयुक्त क्षेत्र बन रहा है संक्रामक रोगके कीटाणुओंके लिए, चतुर चिकित्सक तुरन्त ही नीरोग शरीरमें विषके इन्जेक्शन दे देता है; किन्तु सूक्ष्म दृष्टिसे वंचित हम गुह्य ज्ञानियोंकी सूक्ष्म दृष्टिके द्वारा निर्णीत कार्योंको अपनी ममता व अज्ञ धारणाके कारण अनैतिक कह दिया करते हैं, यद्यपि हमारे युक्तिवाद व प्रमाण-प्रमुखताके इस युगमें भी नैतिक आरोपको निरुत्तर करने एवं गुप्तचरों द्वारा स्थापित षड्यन्त्रने षड्यन्त्रकारियोंको वैधानिक अपराधी सिद्ध करनेके लिए, अपराधियोंकी ओरसे चाक्षुष साक्षीकी उपलब्धि असम्भव कर दी जानेपर झूठे प्रमाण व झूठे साक्षी आयोजित किये जाते हैं, किन्तु भागवत संकल्पके सक्रिय नायक इन वैधानिकताओंके झंझटमें नहीं पड़ते, भले ही वे मरणासन्न बालिके सन्तोषके लिए न्यायवादीकी भूमिकामें कुछ नैतिक एवं वैधानिक आरोप सुना दें।

यदि १९३८ के आस-पास कोई गुह्यवेत्ता (Occultist) रामकी भूमिकामें शम्बूककी तरह, शिवाजीकी भूमिकामें अफजलखानकी तरह हिटलरका वध कर देता या करा देता तो पृथ्वीका समस्त वैधानिक जगत् तथा तत्कालीन

ढीग आफ नेशन जघन्य अपराध कहकर सुप्रीम कोर्ट खडा कर लेते । अपनी समस्त गुह्य-शक्ति ( Occult force ) का अपव्यय करके भी वह गुह्य ज्ञानी इन गुह्य-दृष्टि-विहीन प्रमुख नेताओंको यह प्रत्यक्ष न दिखा सकता था कि जिसका मैंने वध किया है वह हिटलर १९४० से १९४४ तक मानवजातिके लिए पृथिवीपर कुफ्र व तूफान बरपा करके मानवजीवनको नारकीय बना देगा। गुह्य ज्ञानी द्वारा वध कर दिया जानेसे हिटलरका चातुर्वर्षीय घोर कर्म घटित न हो पाता, मानवजाति इस नारकीय पीडासे बच जाती किन्तु स्थूल दृष्टिवाले इतिहासकार इस रहस्यमयी पहेलीमें उलझ जाते। हिटलर उन्हें सन्त और गुह्यज्ञानी (Occultist ) अपराधी ही प्रतीत होता। प्राचीन कालमें यह एक सतोषकी बात थी कि उस युगमें राष्ट्रके संचालक गुह्यज्ञानी होते थे और जनता उनपर वैसा ही विश्वास व श्रद्धा रखती थी जैसी श्रद्धा सौम्य बच्चे अपने माता-पिता पर रखते हैं। पर यदि आज चर्म-चक्षु-हीन भी यह मांग करने लग जाएँ कि उन्हें सूर्यका अस्तित्व तबतक स्वीकार नहीं होगा जबतक सूर्य उन्हे दिखा न दिया जाएगा तो आंखवालोंका निर्णय अमान्य ही रहेगा। यदि आज सूक्ष्म दृष्टिवालोंकी तरह चर्म-चक्षुवाले अल्प-संख्यक हो जाएँ तो चर्म-चक्षुवालोंका देखा-कहा बहुसंख्यक चर्म-चक्षु-विहीन जनतामें मिथ्या ही माना जाएगा।

अतः रामराज्यकी, भगवानके राज्यकी सम्भावनाके तीन साधन हो सकते हैं:-प्रथम-धनपति सत्ताधारी शासक, जिनके हाथमें आधिपत्य है, रामकी ओर, भगवानकी ओर उद्घाटित हों और " राम " के द्वारा जिस प्रकार अन्तःप्रेरित हों, उस प्रकारसे धन, शक्ति, अधिकार, आधिपत्यका उपयोग करें। दूसरा-धन-शक्ति, अधिकार, आधिपत्य ऐसे मनुष्योंके हाथोंमें पहुँचा दिए जाएँ जो एक मात्र भगवानके द्वारा ही प्रभावित होते हैं, हो सकते हैं तथा भगवान " राम " की अन्तःप्रेरणाके अनुसार ही धनका व्यय कर सकते हैं, करते हैं। तीसरा-धनवान् सत्ताधारी, अधिपति अपनी धन-शक्ति व आधिपत्यका उपयोग व व्यय ऐसे व्यक्तियोंके आदेशपर करें जो अबाध रूपमें भगवानकी अन्तःप्रेरणा प्राप्त कर सकते हैं तथा करते हैं। पर भगवानकी अन्तःप्रेरणाका पता लगाना महाकठिन है, कारण भगवान ही एक मात्र शक्ति नहीं हैं, अनेक शक्तियां हैं, जो ऐसी साधु-भाषामें, जो हर किसीको भगवानकी दिव्य भाषा प्रतीत हो सकती है, अन्तःप्रेरित कर सकती हैं, कुमन्त्रणा दे सकती हैं और विशेषतः जब कि अन्तःप्रेरित होनेवालोंकी धारणाएं संकुचित, ससीम कठोर, अनम्य या अपरिवर्तनशील हों, वे अन्धशक्तियां तुरन्त ही हर किसीको-साधु-भाषामें भी बिना मांगे सलाह देनेको उद्यत हो जाती हैं वक्के सलाह देने लगती हैं, जिन्हें हम अपनी बुद्धिका विचार-चातुर्य मान लेते हैं या कोई-कोई भगवान " राम " की अन्तःप्रेरणा। " हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम् " सत्यका मुख चमकीले सुनहरे ढँकनेसे ढका हुआ है। सुवर्ण सुनहरा होता है, परन्तु वह सब, जो सुनहरा होता है, स्वर्ण नहीं होता। पीतल भी सुनहरा होता है तथा पीतल एवं सुवर्णके सुनहरेपनमें जो अन्तर है वह अनुभवकी चीज है। इस लिए यदि कोई व्यक्ति, परिवार, कुल, राष्ट्र या देश स्वर्णमय बनना चाहता है तो वह सोने व पीतलके भेदको पहचान कर सुवर्णका वरण करनेकी योग्यता प्राप्त करे किन्तु यह सबके लिए सम्भव नहीं, तब पारखी नहीं बन सकते। तब वह व्यक्ति, परिवार, कुल, राष्ट्र या देश अपनी क्रयशक्तिको, धनको ऐसे व्यक्तियोंको सौंप दे जो सुवर्ण व पीतलका भेद निमेषमात्रमें जान लेते हैं। किन्तु यदि इतनी उदारता और नि.स्वार्थता सम्भव नहीं है तो क्रय-कार्य ऐसे अनुभवीके द्वारा हो, जो पारखी हो सुवर्ण और पीतलका भेद जाननेमें। इसी प्रकार " रामराज्य " रूपी सुवर्णसे देशका भण्डार तब भरपूर हो सकता है जब धन शक्ति एवं आधिपत्यका उपभोग ऐसे व्यक्तियोंके निर्भ्रान्त निर्णयपर किया जाए जो यह जाननेकी सामर्थ्य रखते हैं कि परात्पर पुरुषोत्तम " राम " भारतके कल्याणके लिए क्या निर्देश कर सकते हैं और जो पहचान सकते हैं कि ऋषिकी वाणीमें सीताको उपदेश देनेवाला व्यक्ति असुर रावण है तथा हा! लक्ष्मण कहकर चिल्लानेवाला मारीच है, वह पुकार भगवान " राम " की नहीं है। महात्माओंसे भी अधिक पवित्र सीताजीका अनुभव-जिसके कारण उन्होंने ऋषि और रावण, मारीच और रामकी वाणीमें भेद न पहचाना—हमें यह बताता है कि " राम " व 'रावण'

की, भगवान व असुरकी अन्तःप्रेरणाको पहचाननेमें "महात्मा" भी धोखा खा जाते हैं क्योंकि न आसुरी शक्ति साकार रूप रखकर अन्तःप्रेरित करती हैं और न देव-शक्तियां।

अनुभव हमें बताता है कि अंगरेज १९४२ में विपत्तिमें फंसे हुए थे, उनके उपनिवेश छिन चुके थे और छिनते जा रहे थे। उस समय उनको निकालना सहज था पर न हम उन्हें निकाल सके और न वे निकले किन्तु १९४५ में वे सर्वविजयी और निरापद होकर भारत छोड़नेको एकदम उद्यत हो गये और १९४७ में झटपट, उल्टा-सीधा उत्तर-दायित्व हमारे सिरपर पटककर चलते बने! जो कुछ हो गया है, उससे प्रतीत होता है कि जर्मनी और जापानकी अन्तिम पराजय निश्चित् थी और यह भगवानका संकल्प था, भले ही हम इसे न जानते थे और न ही जाननेके लिए इच्छुक थे क्योंकि हमारी धारणा अंगरेजोंके प्रति घोर विद्वे-षात्मक हो चुकी थी, उनका नाश देखनेके लिए हम अपने सर्वनाशके लिए भी शायद उद्यत हो सकते थे और इसीलिए हम, दुर्दशाग्रस्त अंगरेजोंको दीवालिया, पराजित समझकर अपने देशको बचानेके लिए जापानसे सन्धि करनेकी सोच रहे थे मानो अपनी ही संस्कृतिके अनुयायी चीनको हस्तगत करनेके लिए कटिबद्ध टोजो भारतको सन्तोंकी साधुताके लिए छोड़ देता। यदि १९४२ में अंगरेज चले जाते और जाते-जाते उस गड़बड़ को एक अराज-कताका, गृह-युद्धका उग्र रूप दे जाते तो टोजो भारतीयोंको राजमुकुट पहनाने नहीं बल्कि पशुकी तरह उपयोगमें लानेके लिए बर्मासे आ जाता तथा देश-भक्तिका दम भरनेवाले मानवोंका वध करवाकर मुसलिम लीगियोंको सिविल सर्विसके मंचपर नियुक्त कर देता। मुसलिम लीग द्वारा कराए गये विभाजनसे उत्पन्न विभीषिका इस बातका प्रमाण है कि उपर्युक्त दुर्दशा कितनी सहज सम्भव थी क्योंकि टोजोके लिए मुसलिम लीगी उतने ही सहायक सिद्ध होते जितने नादिरशाहके लिए अफगान और पठान; किसी इन्स्ट्रेक्स फेल मुसलिम लीगीको पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट बना देनेसे जिले भरके राष्ट्रीय भक्तोंकी लाशें कब्रिस्तान पहुंचाई जा सकती थीं। जिन्होंने १९४७ में पंजाबकी अराजकताको देखा है वे जानते हैं कि कांग्रेसियोंकी ही नहीं बल्कि हिन्दू महासभाइयों एवं राष्ट्र संघियोंतककी "राम-राम-सत्ता" कितनी सहज सम्भव थी। लीगियोंको भी कुछ दिन खा-पी-पहननेकी मौजें ले लेनेके बाद जयचन्द और मीरजाफरकी तरह ठिकाने लगा दिया जाता और इस प्रकार तथाकथित भारतमित्र जापानके महात्मा टोजोको उपद्रवी (?) भारतीयोंसे शून्य १८५८ का हिन्दुस्तान जैसा जापान भक्त भारतवर्ष मिल जाता जहांकी राजभक्त प्रजाको काले अंगरेजसे काला जापानी बननेमें, दिनरात परिश्रम करना पड़ता और यह सब कराया जाता इस नशेमें कि जापान हमारा एशियाई सहोदर है, अंगरेजोंसे तो बेहतर है ही। न जाने हमें उन दिनों कौन प्रवृत्ति सर्वनाशकी ओर धकेल रही थी जिसके प्रभावमें सुध-बुध खोकर इतिहासके वे महारथी भी—जो यह जानते थे कि हिन्दुधर्मके अतिशय विरोधी और इसलामके कट्टर पक्षपाती औरंगजेबने भी मुगल साम्राज्यके लिए अमुसलिम हिन्दु राजपूतोंसे मुसलिम अफगानिस्तानको विजय कराया था और उसी कट्टर मुसलमान औरंगजेबने महोम्मदी राज्य बीजापुरकी मसजिदको तोपोंसे उड़वा दिया था—यह सपना देख रहे थे कि धर्म, राष्ट्र, संस्कृति, सभ्यता, वेश-भूषा, भाषा, खान-पान, जल-वायु, रहन-सहन आदिमें भारतसे नितान्त भिन्न जर्मन हिटलर और जापानी टोजो अपने लाखों सैनिक और अरबों रुपयोंकी युद्धसामग्रीको नष्ट कराकर, भारतको अंगरेजोंसे छीनकर स्वाधीन कर देंगे। स्वप्न-स्वराज्य भोगनेवालोंने तो अंगरे-जोंको भी सलाह दी थी हिटलरके सम्मुख आत्मसमर्पण करने व इंगलैंडको उसके हवाले कर देनेकी।

आज प्रतीत हो रहा है कि जो कुछ हमें १९४७ में मिला वह सब कुछ १९४२ में क्रियात्मक रूपसे व १९४५ में वैधानिक रूपसे मिल जाता तथा देशका विभाजन भी न होता एवं विभाजनके दुष्परिणाममें जो रक्तपात हुआ, वह भी न हो पाता और इस प्रकार १९४२ के अन्ततक ही मुसलिम लीगकी कब्र बन जाती क्योंकि १९४२ में मि० जिन्ना व लीगने सहयोग करना नहीं था और विरोध करनेके कारण भारत-सुरक्षा कानूनके अन्तर्गत वे मौन व निष्क्रिय कर दिये जाते।

किन्तु अंगरेजोंके विरुद्ध उपर्युक्त प्रकारकी विद्वेषात्मक धारणाके होते हुए क्या हम किसी ऐसे व्यक्तिसे परामर्श

करनेकी कल्पना कर सकते थे जो भागवत चेतनासे एकाकार होकर यह बतानेकी सामर्थ्य रखता हो कि हमें पुनः प्रान्तीय मिनिस्ट्रीको स्वीकार करके क्रिप्स प्रस्तावके अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार बनाकर जापानको पराजित करनेका तन, मन, धनसे प्रयत्न करना चाहिये या ऐसे गम्भीर एवं घोर समयमें " भारत छोडो " का विप्लव खडा करके टोजो की सेनाको देहली हस्तगत करनेका अन्यथा उपयुक्त अवसर प्रदान करना चाहिये ? और क्या यह सम्भव हो सकता था कि हम अपनी धारणा व कल्पनाके प्रतिकूल इस परामर्शको स्वीकार कर लेते कि प्रान्तीय मिनिस्ट्री बनाकर प्रान्तीय व केन्द्रीय सरकारें बना लो और अंगरेजोंकी ही नहीं बल्कि एशियातककी रक्षाके लिए जापानको पराजित करो तथा सदाके लिए मुसलिम लीग व पाकिस्तानकी मांगको शक्तिके बलसे मिटा दो ? अंगरेजी हुकूमतसे विरोध करनेवाले किन्तु अंगरेजियत पर मोहित तथाकथित दिग्गज भारतीय नेता यह कैसे विश्वास कर सकते थे कि राजनैतिक लैक्चर देनेवालोंकी दुनियासे दूर रहनेवाला कोई " राम " का भक्त राजनीतिकी भित्तिपर " राम " से कोई भविष्यवाणी प्राप्त कर सकता है ?

आखिर हमें बुरी तरह लज्जित होना पडा; देशका विभाजन देखना पडा। नर-हत्याओंका ताण्डव नृत्य देखा और देख रहे हैं हिन्दु-मुसलिम विद्वेषका वह नासूर जो भरनेमें नहीं आता। एक ही शरीरके दो अंग एक दूसरेके गैर बने हुए हैं। पाकिस्तान भारतके शरीरका वह बाँयां हाथ है जिसमें एग्जिमा हो गया है और वह उस विद्वेषके एग्जिमेके चेपको शेष शरीरमें पोतने पर तुला है और हम " रावण " की शक्तियोंकी मधुमण्डित विषाक्त प्रेरणाओं-पर, सुझावोंपर नाच रहे हैं और सपने देख रहे हैं " राम-राज्य " के ! हरएक कटिबद्ध है अपने संकीर्ण व घृणित स्वार्थको पूर्णतः सिद्ध करनेके लिए चाहे इसके निमित्त उसे किसीका गला ही क्यों न काटना पडे किन्तु वह भी " राम-राज्य " का सपना देख रहा है। मजदूर चाहता है कारखानोंमें कुछ भी काम न करके मैनेजरकी तनख्वाह हडपना, बादमें कारखानेकी मशीने तोडकर मिलमालिकके घरको लूट लेना; किन्तु सपना मजदूर भी " रामराज्य " का देखता है ! और मिल-मालिक चाहता है कि मजदूर चांदीका रुपया पानीमें धोकर सेठजीको वापस कर दे, धोवन ( मैले पानी ) का आचमन करके दिनभर कारखानेमें काम करे, " जल पीवै तो पीवै न खावै कछु अरु वित्तको चित्त चलावै नाहिं ", पर ऐसा उदार मिल-मालिक भी " रामराज्य " चाहता है।

जबतक देशमें धन और आधिपत्यका उपयोग उन व्यक्तियोंकी स्वेच्छाके अनुसार हो रहा है जो यथार्थसे भिन्न अर्ध सत्य या असत्यकी अन्धकारमयी शक्तियोंकी ओर उद्घाटित हैं, उनकी प्रेरणाके अनुसार धन और आधिपत्यका उपयोग कर रहे हैं तबतक " रामराज्य " नहीं किसी दूसरेका ही राज्य है। यदि सचमुच हम " रामराज्य ", " भगवान्का राज्य ", सत्यका राज्य चाहते हैं तब यह एक मात्र भगवान्के द्वारा, उन व्यक्तियोंके द्वारा सम्भव हो सकता है जो भगवान्से एकाकार हो चुके हैं, हो रहे हैं। गुह्य-दृष्टि ( Occult vision ) से शून्य हम यदि मर्यादा पुरुषोत्तम रामके जीवनकी गति विधिकी कापी-टू-कापी, मक्खी-टू-मक्खीको ही रामचरित " रामराज्य " मानेंगे तो योरोप, अमेरीकामें पढनेवाले अनेक भारतीय युवकोंको परिणयके लिए प्रार्थना करनेवाली न जाने कितनी योरोपीयन, अमरीकन विधवाओंके नाक-कान रामचरित-आचरणकी पूर्तिके लिए काटने पडेंगे। अनुजकी भार्याको हरण कर लिया है जिसने, ऐसे न जाने कितने बडे भाइयोंको हर जिलेमें छिपकर वध करना पडेगा। बाह्य रूप तो केवल निमित्त हुआ करते हैं। यथार्थ तथ्य होता है " भागवत संकल्प और उसकी पूर्ति। " बाह्यान्तर परिस्थितिके अनुसार साधन अनेक हो सकते हैं, प्रिय या अप्रिय, मधुर या कटु, कोमल या कठोर, सभ्य या बर्बर, अहिंसामय या हिंसामय।

जहांतक हमारा व्यक्तिगत उत्तरदायित्व अपने व्यक्तिगत जीवनके सम्बन्धमें है, वहांतक हमारा अपनी धारणाओंसे चिपके रहना कुछ विशेष हानिकर नहीं हो सकता बल्कि लाभप्रद हो सकता है किन्तु अपनी धारणाओंको दूसरेपर लादना हानिकर है क्योंकि दूसरोंको अपने " स्वभाव " में अपने " स्वधर्म " का चुनाव करना है। ब्राह्मणत्वके लिए यदि किसीने अपने जीवनके अधिकांशको अहिंसामय बनाया है तो क्षत्रियत्वके लिये किसीने अपने जीवनके अधिकांश-को और कभी कभी सम्पूर्णको हिंसामय बनाया है। पर जब हम तथाकथित पवित्रताकी धारणाओंमें, उस धारणाकी साम्प्रदायिक दासतामें आबद्ध होते हैं और उस साम्प्रदायिक दासताको जन-साधारणपर लादनेको

आतुर हो जाते हैं तब हम संकीर्ण साम्प्रदायिक प्रवृत्तिको फैलानेके लिए महापुरुषोंके जीवनके कृत्योंके आंशिक साधनोंको बटोरा करते हैं तथा उनमेंसे अपने संकीर्ण सम्प्रदायके समर्थनमें जिसे अनुकूल पाते हैं, केवल उसको ही प्रमाण सिद्ध करके जन-साधारणपर अपना सम्प्रदाय लादते हैं। अपने अहिंसा-पंथके प्रचारकी धुनमें हममेंसे कोई श्रीकृष्णके जीवनकी युद्ध-सम्बन्धी सब घटनाओंको छोड़कर केवल व्याध-सम्बन्धी उस घटनाको ले लेते हैं जिसमें व्याधने श्रीकृष्णको मृग समझ कर उनके पैरमें बाण मारा था और उन्होंने व्याधको क्षमा करके अपना पार्थिव शरीर छोड़ दिया था। इस उदाहरणसे हम जनता पर निर्वीर्य तामसिक अहिंसाको लादने लगते हैं। वस्तुतः सत्यसे तथा भागवत संकल्पसे हमें कुछ सरोकार नहीं होता। गुह्य-दृष्टि ( Occult vision ) से हम वंचित हैं और अपनी आंशिक संकीर्ण धारणाको ही शाश्वत सत्य मानते हैं।

मुख्य बात है अन्तःस्थित रामकी प्रेरणाके अनुसार सब कुछ कर जानेको उद्यत होना या इस सामर्थ्याभावमें किसी भागवत-प्रेरित व्यक्तिके आदेशपर मानव-निर्मित बन्धनोंको तोड़कर यन्त्रकी तरह स्वसामर्थ्यमें सब कुछ कर जानेको उद्यत हो जाना। उचित अनुचित, नैतिक-अनैतिक नागरिक-बर्बर कृत्योंके बन्धनसे ऊपर उठकर, सुकृत एवं दुष्कृतकी सीमाओंको लांघकर किसी आध्यात्मिक "राम" के आदेशपर एक ओर अर्जुनकी भूमिकामें शस्त्र-विहीन सहोदर भ्राताका वध करना तो दूसरी ओर चरणोंमें बाण मारनेवाले व्याधको क्षमा करके प्राण छोड़ देना, यशके लिए नहीं अपितु अपयशकी ध्रुव सम्भावना होनेपर भी परिणयके लिए आई हुई किसी सुन्दर युवती, विदुषी, राजपुत्री सूर्पणखासे परिहास करके उसके नाक-कान काट लेना तो दूसरी ओर बड़े बड़े मेधावी, विज्ञान-महारथी, राजनैतिक दिग्गज मन्त्रियोंके सुझावपर भी राजसूय यज्ञके लिए पुनर्विवाह न करके स्वर्ण-प्रतिमाको ही यज्ञ-वेदीपर दाम्पत्यमें नियुक्त करना; विमाताके संकेतपर...मैत्रिक दायभागमें प्राप्तव्य उस अवध-राज्यको त्याग देना जिसकी स्वल्पांश प्राप्तिके लिए भी आजके सन्त हाईकोर्टतक मुकदमे लड़ाते हैं तो दूसरी ओर जिससे कोई सरोकार न था, हस्तक्षेप करनेका वैधानिक अधिकार भी न था, उस पम्पापुर-नरेश बालिको छिपकर बाणसे मार डालना; एक ओर, अछूत समझी जानेवाली किसी ग्राम्य, जंगली, दरिद्र भीलनीके जूठे बेर खा लेना तो दूसरी ओर तपस्वी, विनयशील शूद्र राजा शम्बूकका वध कर देना। "राम राज्य" सिखाता है व्यष्टिमें सन्त होकर भी समष्टिमें भागवत संकल्पके चरितार्थ घोर क्रान्तिकारी बन जाना। हमारा कल्याण उस दिन होगा जब हम महात्मा शिवाजीकी तरह समर्थ गुरु रामदास जैसे उन गुह्य ज्ञानियों ( Occultists ) के आदेशपर चलेंगे जो आकृतिसे नहीं बल्कि प्रवृत्तिसे यह देख लेते हैं कि कैसे और कहां "मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति" का आसुरी नृत्य हो रहा है या होने जा रहा है।

मनुष्यके केवल वास्तविक जीवनको चर्म-चक्षुसे देख सकनेवाला इतिहासकार रामचरितमें केकईके सपत्नभाव, रामका सूर्पणखासे अशिष्ट (?) व्यवहार, रावणकी सीताके प्रति कामुक व धूर्त प्रवृत्ति आदिको ही मूलभूत आधार मानता है जब कि आध्यात्मिक भूमिकापर रामायणका रचयिता इन सबके पीछे प्रच्छन्न रूपमें कार्य कर रही और मानवताको एक मर्यादामें ला रही भागवत संकल्प शक्तिको मूक प्रेरक मानता है। वह देखता है देवासुर संग्रामको, प्रकाशके प्रसारको अन्धकारके राज्यमें, सत्यके प्रतिष्ठानको असत्यके क्षेत्रमें। मानवता, मानव-व्यक्ति, मानव-जीवन वह क्षेत्र, वह राज्य है जहां अन्धकार व असत्य बैठे हुए हैं तथा सत्य एवं प्रकाशको इसीपर अपना अधिकार स्थापित करके इसे रूपान्तरित करना है। इतिहासकी ऐतिहासिकता इस असत्य और अन्धकारकी गति विधि है किन्तु आध्यात्मिककी ऐतिहासिकतामें उस गतिविधिपर अप्रतिहत प्रहार है सत्य एवं प्रकाशका।

उदाहरणार्थ आजके इतिहासकारकी कथा है कि योरोपके साम्राज्यवादियोंने जब जर्मनी और जापानके लिए अपने उपनिवेशोंके सब बाजार व मण्डियां बन्द करनी आरम्भ कर दीं तो हिटलर व तोजोने इन साम्राज्योंको हस्तगत करनेकी सोची किन्तु आध्यात्मिकका सत्य है कि जब मनुष्य-जातिका समस्त बुद्धि-बल जीवन-प्रकृतिकी बर्बरताकी चरितार्थमें बलात् उपयोग किया जाने लगा, योरोपका सम्पूर्ण बौद्धिक ज्ञान जीवनकी विकासी बर्बरताकी चरितार्थताके लिए साम्राज्यवाद व पूंजीवादको पराकाष्ठातक पहुंचा चुका तो "शाश्वत संकल्प" ने जर्मनी और जापानको उनकी साम्राज्य-लोलुप प्रकृतिके अन्तर्गत इन साम्रा-

ज्योंके अपहरणकी प्रेरणा दी। क्योंकि पृथिवीपर तीन प्रकारके राष्ट्र थे, साम्राज्यवादी, कम्यूनिस्ट व शोषित। शोषित राष्ट्र इतने अशक्त थे कि वे हिंसा या अहिंसा किसी भी साधनसे अपना उद्धार न कर सकते थे। केवल जर्मनी, जापान व रूस ये तीन राष्ट्र ही ऐसे थे जो साम्राज्य-विहीन किन्तु " साम्राज्य-लोलुप " थे। इन तीनोंने ही साम्राज्यवादी इंगलैंड, फ्रान्स व अमेरीकाकी कमर तोड दी किन्तु " शाश्वत संकल्प " को बूढे शेरोंको मरवाकर नौजवान खूख्वार शेरोंको साम्राज्यके सिंहासनपर बैठाना मंजूर नहीं था। अतः झटपट उस " संकल्प " ने हिटलरको प्रेरित किया कि वह इंगलैंडसे पहले भयानक शत्रु रूसको समाप्त कर ले और इस प्रकार उस " शाश्वत संकल्प " ने समस्त योरोपके नये सम्राट हिटलरको तथा एशियाके नूतन विजेता टोजोको समाप्त कर डाला और साथ ही साम्राज्यवादकी आसक्तिका अन्त कर दिया। आज साम्राज्य-लोलुपोंको साम्राज्यसे वैराग्य होता जा रहा है। किन्तु इसके भी पीछे एक महान लक्ष्य है और वह है भारतके, सम्पन्न, समृद्ध भारतके द्वारा—न कि आजके दरिद्र नारायणके उपासक खण्डित भारतके द्वारा—मानवताके लिए चिर-शान्ति व दिव्यसुखकी देन, अमर जीवनकी स्थापना, शोषक व शासककी भूमिकामें नहीं बल्कि पालक व पोषककी भूमिकामें भगवानका मानवतामें अपना दिव्य वात्सल्य वितरित करना, यदि मानवता अपने अन्दर हस्तक्षेप करनेका अवसर भगवान्को दे।

भगवान्का संकल्प तो पूरा होगा ही किन्तु यदि हम विरोध करेंगे तो एक भयानक विध्वंस और कुछ विलम्बसे पूरा होगा। १९४२ में अपने देशका शासन-भार न संभालकर हमने "भरत छोडो" आन्दोलन चलाया और इस प्रकार जर्मनी—जापानको सफल होनेका अन्यथा उपयुक्त अवसर दिया, भगवानके संकल्पमें सक्रिय न होकर केवल प्रतिक्रिय-से रहे जिसके परिणाम-स्वरूप विभाजनकी जो मार हमपर पडी है वह हमें असह्य हो रही है। क्या ही अच्छा हो कि हम अपनी भूलसे इस भीषण परिणामसे कुछ सीखें पर हमें तो न जाने कौनसा " राम " बहका लेता है! विभाजनसे पहले हमें सलाह दी गई थी कि विभाजन-स्वीकृतिसे पहले हिन्दुओंको पाकिस्तानसे हटा लिया जाए किन्तु इसे हमने सलाहकारोंकी मूर्खता, लडकपन व तुच्छता मान लिया और अन्तमें वही किया जिसे हम मूर्खता उद्घोषित कर चुके थे और आज भी विभाजितकी एकताके प्रस्तावको गायताक बताया जा रहा है।

वर्तमान युद्धमें भी " शाश्वत संकल्प " ने सन्तों-द्वारा आलोचना एवं दुष्टों-द्वारा निन्दाकी पर्वा न करके वह काम कर डाला है जो शिक्षिता सुन्दर राजकुमारी सूर्पणखाके नाक-कान-कर्तनसे, वृक्षकी आडमें छिपकर बालि-वधसे, निःशस्त्र तथा बेबस कर्णवधसे तथा घोर खाण्डव-दाहसे भी कहीं अधिक भीषण व आलोच्य था और जो आज भी नैतिकों एवं सन्तोंकी दृष्टिमें घोर आलोचनीय व निन्दनीय हो रहा है और वह है उस अव्यक्त—व्यक्त—द्वारा हिरोशिमाका अणुबमसे सर्व स्वाहा। आज जो एशियाके पराधीन राष्ट्र स्वाधीन होकर छाती तानकर स्वतन्त्रताकी सांस ले रहे हैं यह उस अव्यक्त—व्यक्तकी क्रूर कृपाका प्रसाद है जो नैतिक एवं सन्तोंके न्याय—विधानमें क्रूर है तथा स्वाधीनता पानेवालोंके लिए कृपाका प्रसाद है।

अतः " रामराज्य " के लिए भगवान् कैसा विधि-विधान चालू करेंगे, यह काम भगवानका है, हमारा नहीं। हममेंसे सबसे चतुर और कुशाग्र बुद्धि जैसा विचार और निर्णय करके जो कुछ हित व शुभ कर सकता है कम-से-कम उतना हित व शुभ भगवान कर ही देंगे, इस नन्हीं-सी किन्तु अटूट श्रद्धासे आरम्भ करके भगवान पर भरोसा करना ही पडेगा। स्वयं यह पहचाननेमें असमर्थ होनेके कारण कि कौनसी कुप्रवृत्ति असुरकी ओरसे है और कौन-सी प्रेरणा भगवानकी ओरसे, हमें ऐसे व्यक्तियोंपर अटूट विश्वास करना पडेगा जो भगवान्से तादात्म्य स्थापित कर चुके हैं या कर रहे हैं।

भगवान्के राज्यके लिए यह कोई अटपटी, अद्भुत शर्त नहीं है। चिकित्सा—शास्त्रसे अनभिज्ञ रोगीको भी चिकित्सकपर विश्वास करना पडता है। यहांतक कि अनेक बार रोगके प्रकोपको उत्तरोत्तर बढानेवाली औषधियोंका धैर्य, सन्तोष व विश्वासके साथ सेवन करना पडता है। यह सब चिकित्सककी आज्ञाकारिता व प्रतिष्ठाके लिए नहीं प्रत्युत रोगीकी भलाईके लिए कराया जाता है और यह रहस्य इसलिए अज्ञात रहता है क्योंकि रोगी चिकित्सा-शास्त्रके ज्ञानसे अनभिज्ञ है। भगवान् ही हमपर इतनी कृपा और करें कि हम अपने " मैं पन " को, अपनी अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिके बडप्पनको कुछ संवरण करके, एक ओर रखकर उन पुरुषोंसे भी पूछ लेनेकी उदारता दीखाने लगें जो भगवान्के संकल्पको पहचाननेकी चेष्टामें संलग्न हैं।

# ऐतिहासिक ग्रंथोंके भाषाभाष्यमें अर्थविपर्यय

( लेखक : ठाकुर शालग्रामसिंह पमार )

सर्वसाधारण जिज्ञासुओंके पठन पाठनमें अधिकांश ऐतिहासिक ग्रंथ, वाल्मीकीय रामायण, महाभारत, भागवत, पुराण, रामचरितमानस आते हैं। इन ऐतिहासिक ग्रंथोंके अनुवादोंमें, अनभिज्ञतावश सार्थक-अर्थ कहीं कहीं नहीं हो पाते हैं। उदाहरणस्वरूप महाभारतपर भाषानुवाद पंडित श्रीपाद दामोदर सातवळेकरने किया है, आदिपर्व अध्याय १७२ श्लोक ३८ —

जितोऽहं पूर्वकं नाम मुञ्चाम्यंगारपर्णताम्।
न च श्लाघे बलेनांग नाम्नाज्जन संसदि ॥३८॥

"अङ्गारपर्ण" का अर्थ "पर्ण अर्थात् रथ" किया है। यह उपयुक्त नहीं; उसका भाषान्तर इस प्रकार हो; अङ्गार-पर्ण = अग्निके प्रज्वलित अङ्गारका पर्ण अर्थात् दल ( सेना समूह ) इतिहासमें ऐसे यौद्धिक नाम व शब्द प्रायः होते हैं। इस प्रकारके दल प्राचीन तथा मध्यकालीन भारतमें थे, जिनकी राजधानियोंके अवशेष एवं क्षत्रिय वंश, परम्परासे चले आ रहे हैं। गन्धर्वराजका आयुध आग्नेयास्त्र था, जिससे उसने अर्जुनपर आक्रमण किया और उसका वह अस्त्र, अर्जुनके प्रतिकारसे नष्ट हुआ।

पर्ण अर्थात् दल, सेना, कोर, अनी, समूह, रास, रन, आदि नाम भूतकालीन भारतमें थे *; अङ्गारपर्ण, अगदलपुर दल, दलवारे, दल-दलहा, सुपर्ण, ऋतुपर्ण, अदलया, अदल, आदल, इदल, ईदल, उदल, ऊदल, एदल, कादल, पुर, कादरपुर, गादल, दीदलपुर, वादलपुर, मामदल, आरदलपुर, सहदलपुर, सैदलीपुर, हयदलपुर, हयवधपुर, बसन्दरा राजवंश, तथा राजधानी, अगनीपालक, बसन्दरा, आगखेडो, अगनपुरा, अगराना, अगवानपुर, अगरास ( आगका युद्ध या ढेर, समूह )।

यदि पर्णका अर्थ रथ किया भी जावे तब आयुध ही करना संगत होगा। यान अर्थात् सवारी नहीं, अतएव महाभारत आदिपर्व अध्याय १९४ श्लोक ११ में रथ-आयुधका उल्लेख है। "पाण्डवगण लेकर रथ+, नाग खड्ग, गदा, परशुध, दिव्यास्त्र सम्बन्धी नानाविधि विचित्र कथाओंको कहने लगे" गन्धर्वराजने अर्जुनसे कहा कि "मेरा उत्तम विचित्र रथ था सो मैं चित्ररथ करके प्रसिद्ध था अब वह रथ अस्त्राग्निसे जल गया, अतएव चित्ररथ× होनेपर भी, अब मुझको दग्धरथ नाम मिला।" इससे स्पष्ट है कि उस गन्धर्वका रथ सवारीका विचित्र रथ था। अतः पर्णका अर्थ सवारी नहीं होना चाहिए।

गन्धर्वने पाण्डवोंको सम्बोधन कर कहा कि "मेरे अधिकारका यह वन अङ्गारपर्ण नामसे प्रसिद्ध है।" गन्धर्व- अङ्गारपर्णके नामका राज्य था, ऐसे राजाओंके नाम आयुधके और राज्यके उसी अस्त्रके प्राचीन समयमें होते थे, जिनका वर्णन किया जाता है। बाण अस्त्र, बाणवंश, बाण-राजधानी ( खेडा )। बाण-राजा असुर बलिका पुत्र था, यह ८ वीं शतीविक्रमके आसपास विद्यमान था। सव्यराजा, सव्यआयुध, सव्यीराजधानी। तोमरअस्त्र, तोमरराज-वंश, तोमरराजधानी, कटारावंश, कटारा आयुध, कटारा खेडा। कटारी आयुध, कटारिया राजवंश, कटारारी खेडा। सिरोहिया राजवंश, सिरोही हथियार, सिरोही खेडा। असिशस्त्र, असि आ खेडा, असिया राजवंश। धनई अस्त्र धनई क्षत्रियवंश, धनई खेडा। सेल शस्त्र, सेल आ वंश, सेल खेडा। गदा-आयुध, गदा खेडा, गदापुरया राजवंश। वकशस्त्र, वकसेना, वकावली, वकशर खेडे तथा वकश-दिया, वकावली वंश। सहस आयुध, सहसबाहु राजा,

---

* प्राचीन भारतमें क्रमशः प्रत्येक अक्षरके नामके हथियार थे, अतएव अकारादि क्रमसे- 'अ' से 'ह' तकके दल लिखे हैं। अन्य अक्षरोंके निम्न कुछ दिये हैं— असेना, अरनिया, अरन, अगरा (गदा), अजीतपुरया, अटारिया, अमरहा, अरनीखाना, ( भक्षण ), इकोरी, इद्दरी, उलरापुर, उशर, उसेना, उमरिया, ऊमरा, एलरा, एरण, एदहा, ओशरा, औराई (राज) हथरा, हहम, हयदलपुर, आदि आदि।

+ श्लोक- ११ अध्याय १९४ आदिपर्व महाभारत- ते तत्र शूराः कथाप्रम्बभूवः कथाविचित्राः पृतनाधिकाराः। अस्त्राणि दिव्यानि रथांश्च नागान्खड्गान्गदाश्चापिपरश्वधांश्च ॥

× अस्त्राग्निना विचित्रोऽयं दग्धो मे रथ उत्तमा। सोऽहं चित्ररथो भूत्वा नाम्ना दग्धरथोऽभवम् ॥ ४० ॥ महा. अध्याय १७२, आदिपर्व श्लोक ४०।

सहस्रमदिथावंश, सहस्रधाम, सहस्रपुर राजधानियाँ। अगियवन, बनकोटा, वनहीं, बनहरा, वनथल, बनवली, कालवन, बनजरिया, बनकटिया आदि आदि।

प्राचीनकालमें राजाके नामकी राजधानी होती थी इसकी परिपाटीको सभी राज्याधिकारियोंने अपनाया था, और राजाका नाम प्राय आयुधपर हुआ करता था। इसके प्रमाण इतिहास, पुराणोंमें पाये जाते हैं, विष्णुपुराण, अग्नि-पुराण, भागवतपुराण, वाल्मीकिरामायण महाभारत आदि में– गाधिने* गाधिपुरकी स्थापना की। कम्पिलने× कम्पिल राजधानी स्थापित की। चाहमानेन,– चौहानपुर बसाया। मांडेरको भण्डीराजने बसाया, मण्डीका कुल उसके पीछे मांडेरे वंश चला। वैद्यदेवने-वेदामई (बदायूं) स्थापित की। संभरने-संभर खेड़ा बसाया उसकी संतान संभरवार हुई। ककखटराजने अपनी राजधानी ककेट निर्माण की इसकी सन्तानकी शाखा ककेट हुई।

भारतीय प्राचीन इतिहासकी शृंखला पूर्तिमें कठिनाईका एक कारण यह भी है कि पुराण, इतिहासोंकी कथाओंमें अर्थका सामंजस्य न होनेसे अर्थका यथार्थ भाव बदल जाता है। कतिपय विद्वान उरग, गन्धर्व, नर, किन्नर, यक्ष, राक्षसोंको कल्पित प्रक्षिप्त मानकर उपेक्षाकी दृष्टिसे देखते हैं। अतः इस अनभिज्ञताकी उलझी गुत्थी सुलझाना कठिनही नहीं अपितु असम्भव जान पड़ती है।

द्वितीय कारण टीकाकार महोदयोंको प्राचीन भारतीय युद्ध सामग्री तथा युद्धविज्ञान और क्षत्रियजाति जिसमें महत्वपूर्ण इतिहास निहित है, इनसे अनभिज्ञता एवं यथेष्ट ज्ञानका न होना है, यह कमी रह जाना अनिवार्य है। सुर, देव, देवता, सिद्ध, नर, किन्नर, नाग, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, असुर+, असुरहा, सुपर्ण, सहस, सहस्रराव, दैत्य, पैशाच, प्रतिहार, माली, विद्याधर, वैद्य, सोमवंशी, ऋषि आदि क्षत्रिय थे, युद्धके योद्धा थे। इनकी राजधानियों-के भग्नावशेष स्थान भारतवर्षमें ही हैं।

मुनि विश्वामित्रने रामजीको अस्त्रास्त्र प्रदान किये हैं उनमें यह आयुध हैं– नागास्त्र, गन्धर्वास्त्र, दैत्य, पैशाचास्त्र, प्रतिहार, माली, सुमाली, विद्याधर, वैद्याधरास्त्र, सोमास्त्र, आदि वाल्मीकिरामायण बालकांड सर्ग २७ तथा २८। यथा देवपुरा, देवका, देवखेड़ा, देवसापुर, देवगढमऊ, देवकरिया, देवरार, देवराबा, बरमदेव, बमदेव, देवकहा, देवहरिया, खामेदेव, देवमरिया, गन्धारे, गन्धोलिया, गांधारवाल, गान्धारवंश, गन्धारिया, गंधारदेश, काबुलके अन्तर्गत, गन्धारी-गन्धारदेशकी।

नागोंको सर्प जन्तुके रूपमें, गन्धर्वोंका आकाशमें स्वर्गके नीचे स्थान गन्धर्व लोक, तथा असुर, राक्षस, मनुष्य जातिसे भिन्न सींगोंवाले क्यों? देव, देवता, सुर स्वर्गके रहनेवाले थे ऐसी कल्पनाओंका रूप प्रचलित होनेका कारण ढूंढनेमें बुद्धि कुण्ठित होती है उपर्युक्त जातियोंको आयुधोंके नामकी पाते हैं, भारतके भिन्न भिन्न स्थानोंमें भग्नावशेष विद्यमान है। इनको यौद्धिक होना भी पाते हैं, और अब वर्तमानमें क्षत्रियवंश एवं शाखाएं भी इन्हीं नामोंकी हैं। टीकाकार क्यों मनुष्य जातिसे भिन्न माने। राक्षस संज्ञाके योद्धा-माली, सुमाली, रावण आदि इसी कोटिके थे, रावण उत्तम कुल पुलस्त्यका नाती, ब्राह्मण-क्षत्रिय योद्धा* था। इनका युद्ध देवकोटिसे निकृष्ट राक्षस कोटिका था।

नाग कन्याओंके विवाह मनुष्योंसे हुए हैं, और अब भी क्षत्रियोंमें होते हैं, उनमें उत्पन्न सन्तानें एवं सगे सम्बन्धी सब मनुष्य ही तो थे। तब इधर आकर बुद्धिविकास युगमें टीकाकार जन नाग जाति, क्षत्रिय नाग वंशियोंको भुजङ्गजन्तु क्यों मानते हैं। गन्धर्वोंका भी इसी भूमिपर होना पाया जाता है, किन्नर देश इसी पृथ्वीपर भारतकी सीमाके समीप है। मुनि, दैत्य, देव, सिद्ध, असुरोंके यहीं प्राचीन खेड़े थे वे भग्न अवस्थामें पड़े हैं। आशा है विद्वद्वर इस विषयपर विचार कर उपर्युक्त ग्रंथोंकी टीकाओंका परिमार्जन करनेका प्रयास करेंगे। इतिशम्॥

---

* वाल्मीकीय रामायण बालकाण्ड सर्ग ३४, श्लोक ६।

× एन्शियण्ट मिडि-इण्डियन क्षत्रिय ट्राइब्ज भाग १, पृष्ठ ५२। (Ancient Midy Indian Ksatriya Tribes, Vol.I, p, 52)

\+ असुरोंके द्वारा बनवाये हुए अशोकके महल और सभा भवन पाटलिपुत्र (पटना) में थे।

* हलायुधने अपने पिङ्गल सूत्रवृत्तिमें श्लोक उद्धृत किया है:—

ब्रह्मक्षत्रकुलीनः प्रालीन सामन्तचक्रनुतचरणः। सकलसुकृतैक पुंजः श्रीमान्मुञ्जश्चिरं जयति॥

# वैदिकधर्म और जैन तथा बौद्धधर्म

( लेखक— श्रीयुत गङ्गाप्रसादजी )

● ● ● ● ● ● ●

" वैदिक धर्म " के जुलाई मासके अंकमें श्री सत्यभक्तजी सम्पादक " संगम " वर्धाका लिखा हुआ एक लेख "वैदिक धर्म और जैन धर्म" शीर्षकसे छपा है जिसमें योग्य लेखकने वैदिक तथा जैन धर्मके बहुतसे गुण व दोषोंका वर्णन करके अपने स्वतन्त्र विचार प्रकट किये हैं। लेखके अन्तमें श्री पं० सातवलेकरजी सम्पादकने एक टिप्पणी देकर यह लिखा है जो पाठक इस लेखसे मतभेद रखते हैं वे अपना लेख भेज सकते हैं, वह छापा जायगा।

( १ ) लेख निष्पक्ष भावसे लिखा गया है और उत्तम है। मुझको केवल दो विषयोंपर अर्थात् " यज्ञ " व " संन्यास " विषय पर अपने विचार प्रकट करने हैं।

( २ ) जिस समय महात्मा गौतम बुद्धने अपने धर्मका उपदेश किया उस समय वैदिक धर्ममें दो बडे दोष आगये थे, एक यज्ञमें पशु बलि देना और दूसरा शूद्रोंपर सामाजिक अत्याचार। मैंने अपने पुस्तक Fowrtain mad of Religion में जिसका हिन्दी अनुवाद " धर्मका आदि स्रोत " है। इस विषयपर कुछ विस्तारसे लिखा है। म० बुद्धका उद्देश्य वास्तवमें इन्हीं और ऐसी कुछ अन्य बुराइयोंको दूर करना ही था, किसी नये धर्मकी स्थापना करना उनका उद्देश्य नहीं था।

( ३ ) इसमें सन्देह नहीं कि उस समय यज्ञोंमें बहुधा पशुबलि दी जाती थी। म० बुद्धने इसका घोर विरोध किया। परिणाम यह हुआ कि यज्ञोंमें पशुबलि देना बन्द हो गया और यज्ञ भी बन्द हो गये। जैसा लेखकने लिखा है वास्तवमें स्वामी दयानन्द सरस्वतीने यज्ञोंका पुनरुद्धार किया। लेखकके शब्द ये हैं– " पशुवधवाले यज्ञोंका अन्त हो गया है और स्वामी दयानन्दजी जैसे वैदिक आचार्योंने यज्ञोंके अर्थ बदलकर जो अहिंसक यज्ञ बना दिये हैं उसका श्रेय श्रमणोंकी विजयको है। " इन शब्दोंपर मुझको आपत्ति है।

( ४ ) म० बुद्धने अपने उपदेशोंमें अनेक स्थलोंपर स्वयं कहा है कि उनसे पूर्व समयके ब्राह्मण यज्ञोंमें पशुओंकी हिंसा न करके घी, दही, तेल, मधु खांड आदि पदार्थोंसे यज्ञ + करते थे। इस विषयमें कुटदन्त सुत्र बडे महत्वका है। कुटदन्त मगधके राजाका पुरोहित और एक संपन्न ब्राह्मण था जो एक महायज्ञ करना चाहता था जिसमें ३१०० पशुओं ( अर्थात् १०० गौ, १०० बैल, ५०० बछडे, १०० बकरे व १०० भेडोंकी हिंसा होनी थी। उसके ग्रामके पास म० बुद्धका आगमन होनेसे वह इस यज्ञके विषयपर उनसे भेट करनेके लिये गया क्योंकि उसने सुन रखा था कि म० बुद्ध " १६ परिष्कार सहित त्रिविध संपदायुक्त " अहिंसक यज्ञकी शिक्षा देते हैं। कुटदन्तसे उसके विचार जानकर म० बुद्धने उसको अपने पूर्वजन्मकी एक कथा सुनाई जिसमें वे एक राजाके पुरोहित थे। उस राजाने यज्ञ करना चाहा। पुरोहित ( अर्थात् म० बुद्धने ) उससे कहा कि उसकी प्रजामें बहुतसे दीन, रोगी, दुखिया, चोर, लुटेरे हैं, पहले उनके दोषोंको दूर करना चाहिये। राजाने पुरोहितकी सलाहसे ऐसा ही किया। प्रजा सुखी होगई। फिर पुरोहितने राजाके चित्तकी शुद्धि कराई। उसके पश्चात् राजासे यज्ञ कराया जिसमें कोई पशु नहीं मारे गये, घी, खांड आदिसे वह यज्ञ हुआ।

( ५ ) कुटदन्तने म० बुद्धसे पूछा कि क्या इससे भी अधिक फलवाला और अल्पसामग्रीका यज्ञ होता है। म० बुद्धने कहा कि शीलवान् भिक्षुओंको देना और उनके लिये 'विहार' ( आश्रम ) बनवाना उससे अधिक यज्ञ है। इससे भी अधिक × फलदायी ५ यमोंका पालन करना, व समाधि यज्ञ बतलाये और सबसे अच्छा "प्रज्ञा यज्ञ"

---

\+ देखो " दीर्घनिकाय " का राहुल सांकृत्यायन कृत हिन्दी अनुवाद।

÷ इन यज्ञोंका कुछ विवरण दीर्घनिकायमें दिया गया है।

बतलाया। यह सुनकर कुठदन्तने म० बुद्धका शरणागत उपासक होना स्वीकार किया और कहा " गौतम यह मैं १०० गौ, बैल आदि छुड़वा देता हूं, जीवन दान देता हूं, वे हरी घास चरें, ठंडा पानी पीवें " इत्यादि ॥

( ६ ) ऊपर लिखे दान योग साधना आदि सब कार्यों-को स्वयं म० बुद्धने यज्ञ कहा है। गीताके अ० ४ के श्लोक २५ से ३१ तक इसी तरह बहुत प्रकारके अनेक यज्ञों ( द्रव्ययज्ञ, तपोयज्ञ, स्वाध्याय यज्ञादि ) का विधान करके यज्ञकी महिमा इस प्रकार वर्णन की गई है-" नायं लोकोऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरु सत्तमः " अर्थात् " यज्ञ-हीनके लिये यह लोक भी नहीं फिर हे अर्जुन दूसरा लोक कैसे हो सकता है ? "

यज्ञ का अर्थ केवल अग्निहोत्र नहीं। इस शब्दका बहुत विस्तृत अर्थ है। यह शब्द यज् धातुसे बना है जिसके अर्थ " यज् देवपूजा संगतिकरण दानेषु " हैं, अर्थात् बड़ोंकी पूजा व सेवा करना बराबरवालोंसे मेलमिलाप सहयोग करना और छोटोंको दान देना-इस प्रकार सब प्रकारके अच्छे काम यज्ञ शब्दके अन्तर्गत हैं।

जब कि स्वयं म० बुद्धने अहिंसक यज्ञोंको माना है तो यह कहना कि " स्वामी दयानन्द जैसे वैदिक आचार्योंने यज्ञोंके अर्थ बदल कर अहिंसक यज्ञ बना दिये, " आर्य समाजियोंके लिये न्याय करना नहीं है।

( ७ ) दूसरा विषय संन्यास आश्रम का है। म० बुद्ध व म० महावीरकी बड़ी भारी देन हिन्दुओंके लिये यह थी कि उनके उपदेशसे पशु हिंसा दूर हुई और मांस भक्षण भी कम हुआ। लेखकका यह कथन सत्य है कि करोड़ों ब्राह्मणपन्थी वैष्णव वा अन्य जो मांस नहीं खाते यह म० बुद्ध व महावीरकी शिक्षाका ही प्रभाव है।

परन्तु हिन्दू जातिमें जो झूठे साधु नामधारी भीख मांगनेवालोंकी लाखों संख्या है " जिनके बोझसे समाज दबा जा रहा है " यह भी म० बुद्धकी देन है। इस बातको लेखकने कुछ दबे शब्दोंमें इस प्रकार स्वीकार किया है-" ब्राह्मण पन्थियों पर भी श्रमणों ( अर्थात् बौद्ध व जैन प्रचारकों ) का ऐसा असर पड़ा कि उनमें भी युवक साधु होने लगे। " परन्तु बौद्ध धर्मके संबन्धमें इसकी कुछ अधिक व्याख्या करनी जरूरी है।

( ८ ) वैदिक धर्ममें संन्यास आश्रम आयुके चतुर्थ भागके लिये रखा गया है जब कि मनुष्यकी इन्द्रियादिका दमन होकर वह संन्यासके योग्य हो जाता है। यदि उससे पहले कोई संन्यासी होना चाहे तो केवल उस विशेष अवस्थामें हो सकता है जब कि कमसे कम उसकी पुत्रे-षणा ( पुत्रोंकी इच्छा ) वित्तेषणा ( धनकी इच्छा ) और लोकेषणा ( यशकी इच्छा ) बिलकुल शान्त हो जांय। यह नियमका केवल अपवाद रूप है।

परन्तु बौद्ध धर्ममें इसके विपरीत है। म० बुद्धकी शिक्षा है कि बिना संन्यास लिये ( जिसको प्रव्रज्या कहते हैं ) कोई मनुष्य मोक्षका अधिकारी नहीं हो सकता। इसके लिये सब कोई भिक्षु पर परिव्राजक बनना चाहते हैं और किसीको आयुकी दृष्टिसे कोई बाधा नहीं। बालक भी भिक्षु बना दिये जाते थे। जब म० बुद्ध एक बड़े भिक्षु संघके साथ अपने पिताके पास कपिलवस्तु पहुंचे तो उनकी स्त्री ( यशोधराने ) अपने पुत्र राहुल को जो लगभग १० वर्षका था यह कहकर म० बुद्धके पास भेजा कि अपने पितासे अपनी दायसंपत्ति मांगो। माताका आशय शायद यही था कि उसको म० बुद्ध उसकी राज्य संपत्ति दिलवा देवें। बालकने सीधे भावसे माताके शब्दोंको म० बुद्धसे कहा। म० बुद्धने तुरन्त अपने शिष्योंको आदेश दिया कि राहुल-को प्रव्रज्या दी जाय और वह भिक्षु बना लिया जाय। म० बुद्धके पिता शुद्धोदनको इससे बहुत दुःख हुआ और उसने म० बुद्धसे इसका प्रतिवाद किया, तब यह आज्ञा दी गई कि आगेसे कोई अल्प आयुका बालक बिना उसके संरक्षक-की अनुमतिके " भिक्षु " न बनाया जाय। परन्तु अब संरक्षकोंकी अनुमति मिलना भी कठिन नहीं, और बालकों-को भिक्षु बनाये जानेका द्वार बन्द नहीं हुआ। इसका परिणाम यह हुआ कि म० बुद्धके समयमें ही लाखों भिक्षु हो गये और उनके निवासके लिये स्थानस्थान पर आश्रम बनाये गये जो " विहार " कहलाते थे। मगध देशमें जहां म० बुद्धका अधिक प्रचार हुआ इतने विहार बने कि उस प्रान्त या देशका ही नाम बिहार Bihar पड़ गया जो अबतक प्रान्तका नाम है।

( ८९ ) बालकों व युवकोंको भिक्षु ( या संन्यासी ) बनाना, जिसको वे फिर त्याग नहीं सकते बडी भयंकर बात है। कामके वेगको रोकना बहुत कठिन है । इतिहासमें ऐसे उदाहरण हैं कि ऋषि मुनियोंके लिये भी कामके वेग-का रोकना कठिन पडा । बौद्ध धर्मने जो युवावस्थामें ही भिक्षु व भिक्षुणी बनानेकी प्रथा चला दी उसका परि-णाम वही हुआ जो होना था। भिक्षु व भिक्षुणियोंमें व्यभिचार फैला । बहुतसे खुल्लम खुल्ला भैरवीचक्रोंमें शामिल हो गये यह वज्रयान के नामसे प्रसिद्ध हुआ, श्री राहुल सांकृत्यायनने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक “ बुद्ध-चर्या ” की भूमिकामें स्पष्ट शब्दोंमें लिखा है कि अशोक-के ४०० या ५०० वर्ष पीछे जो बौद्ध धर्मका शीघ्र ही अधःपतन हुआ उसका मुख्य कारण श्रीस्वामी शंकरा-चार्यकी शिक्षाका प्रचार नहीं था, किन्तु भिक्षुओंका असदाचार था। वे लिखते हैं कि लगभग सब भिक्षु व्यभि-चारी हो गये थे। जब बौद्ध धर्म गया तो वैदिकधर्मके स्थानमें पौराणिक धर्म फैला । जो बौद्ध गृहस्थ थे वे पौरा-णिक शाक्त, शैव या वैष्णव होगये और जो बौद्ध भिक्षु थे वे पौराणिक साधु या संन्यासी बन गये, इनकी संख्या लाखों ही थी। इनमें अधिकांश दुराचारी थे।

इस प्रकार लाखों नामके साधु जिनकी वृत्ति भीख मांगना ही था हिन्दू समाजमें आगये । समाजका यह भी दोष रहा कि इस प्रवाहको आगेके लिये रोका नहीं । बौद्ध प्रथामें भिक्षु बनानेके लिये कुछ नाममात्रकी परीक्षा भी होती थी पर पौराणिक संन्यासी बननेके लिये खुली छुट्टी थी, जो चाहे सिर मुंडाकर या रंगे वस्त्र पहनकर साधु या संन्यासी बन सकता था। बहुतसे गृहस्थ अपने गृहस्थका भार न सहते हुए इस प्रकार रंगे कपडे पहनकर संन्यासी हो गये। बहुतसे अपराधी चोर, डाकू, भी जिनकी तलाशमें पुलिस रहती थी, सिर व मूंछ डाढी मुंडवाकर साधु बन गये। हिन्दु समाजकी ओरसे कोई संगठन ऐसा नहीं था जो इसका प्रबन्ध करती। भारतीय सरकारको यह सीधा बहाना या जवाब था कि धार्मिक मामलेमें सरकार हस्त-क्षेप नहीं कर सकती । अब भारतका नया विधान बननेपर यह एक बडी समस्या जनताके ऊपर अतीतकी देन है जिस-की उचित व्यवस्था नये शासकोंको करनी होगी।

---

स्वाध्याय-मण्डल-संचालिता

# संस्कृत भाषा-प्रचार-समिति, किल्ला पारडी ( सूरत )

# परीक्षा-विभाग

६-७ सितम्बर ५२ ई. को होनेवाली संस्कृतपरीक्षाओंका कार्यक्रम निम्न प्रकारसे है-

| शनिवार ६ सितंबर | | रविवार ७ सितंबर | |
|---|---|---|---|
| १०॥ से १॥ | २॥ से ५॥ | १०॥ से १॥ | २॥ से ५॥ |
| विशारद-प्रश्न पत्र १ | विशारद-प्रश्न पत्र २ | विशारद-प्रश्न पत्र ३ | विशारद-प्रश्न पत्र ४ |
| × | परिचय-प्रश्न प्रत्र १ | परिचय-प्रश्न पत्र २ | परिचय-प्रश्न पत्र ३ |
| × | × | प्रवेशिका-प्रश्न पत्र १ | प्रवेशिका-प्रश्न पत्र २ |
| × | × | प्रारम्भिणी | × |

संस्कृतभाषाका अध्ययन करना प्रत्येक भारतवासीका राष्ट्रीय धर्म है।

संस्कृत हमारी मातृभाषा है। अतः उसका ज्ञान होना परम आवश्यक है। जो मातृभाषा है वह कठिन या दुर्बोध कैसे हो सकती है ?

ॐ

# ऋग्वेदका सुबोध भाष्य

# उषा देवता

## (१) शुनःशेप ऋषिका उषाका वर्णन

( ऋ० १।३०।२०-२२ )

आजीगर्तिः शुनःशेपः स वैश्वामित्रो देवरातः । २०-२२ उषाः । गायत्री ।

१ कस्त उषः कधप्रिये भुजे मर्तो अमर्त्ये । कं नक्षसे विभावरि ॥ २० ॥

२ वयं हि ते अमन्मह्याऽऽन्तादृपराकात् । अश्वे न चित्रे अरुषि ॥ २१ ॥

३ त्वं त्येभिरा गहि वाजेभिर्दुहितर्दिवः । अस्मे रयिं नि धारय ॥ २२ ॥

---

१ ( हे कध-प्रिये ) स्तुति जिसको प्रिय है ऐसी ( अ-मर्त्ये ) अमर ( विभावरि ) विशेष प्रभावाली ( उषः ) उषा देवी ! ( ते भुजे कः मर्तः ) तुझसे भोग प्राप्त करनेके लिये कौन मनुष्य योग्य है ? और तू ( कं नक्षसे ) किसके पास जाती है ? ( २० )

२ ( अश्वे न चित्रे अरुषि ) हे घोडीयोंसे युक्त अथवा व्यापक, अथवा घोडियोंके समान चित्र विचित्र तेजवाली उषा देवी ! ( आ आन्तात् आ पराकात् ) समीपसे अथवा दूरसे ( वयं हि ते ) हम सब तेरा ही ( अमन्महि ) ध्यान करते हैं । ( २१ )

३ हे ( दिवः दुहितः ) स्वर्गकन्ये उषा ! ( त्वं त्येभिः वाजेभिः ) तू उन अन्नों और बलोंके साथ ( आ गहि ) आओ और ( अस्मे रयिं नि धारय ) हमें धन देदो ॥ ( २२ )

# शुनःशेप ऋषिका उषा दर्शन

## दिव्य कन्याका आदर्श

ये शुनःशेप ऋषिके उषा देवताके तीन मंत्र हैं। इनमें उषाको '**स्वर्गकन्या**' कहा है। यह (**दिवः दुहिता**) द्युलोककी पुत्री है। यह (विभावरी) विशेष चमकनेवाली, विशेष तेजस्विनी है, यह (अरुषी) प्रकाश करनेवाली, स्वयं प्रकाश फैलानेवाली है। द्युलोक प्रकाश देनेवाला है। द्युका ही अर्थ प्रकाशनेवाला है। ये सब उषाके विशेषण उसकी तेजस्विता बता रहे हैं।

### अमर उषा

'**अ-मर्त्या**' यह उसका विशेषण उसका "सदा आनेका भाव" बता रहा है। वस्तुतः यह उषा सूर्योदय होनेसे नष्ट होती है, परंतु फिरसे दूसरे दिन वैसीही तरुणी बनकर चमकती हुई आती है। इसलिये कभी वृद्ध न होनेके कारण और सदा तरुण रहनेके कारण इसका वर्णन 'अ-मर' पदसे किया गया है।

### घोडोंपर बैठनेवाली

'**अश्व्या**' यह एक इसका और विशेषण है। घोडोंसे यह युक्त है। उषःकाल होते ही वीर लोग घोडोंपर सवार होकर बाहर जाते हैं। उषा आते ही चारों ओर घुडसवार चलने लगते हैं। इसलिये इसको 'अश्व्या' कहा है। इसी तरह '**कथ-प्रिया**' भी इसको कहा है। कथा जिसको प्रिय है। उषःकाल होते ही ईश्वरके स्तोत्र स्तोतागण गाते हैं, कथाएं कहीं जाती हैं। इसलिये उषाको कथा तथा स्तुतिप्रिय है ऐसा वर्णन किया गया है।

१ **कः मर्तः ते भुजे**— कौन मनुष्य तुझसे भोगके पदार्थ प्राप्त करनेके लिये योग्य होता है? इस प्रश्नका उत्तर आगेके मंत्रोंमें आया है। जो (उष-बुध्) उषःकालमें जागता है और कार्य करने लगता है वह भोगके पदार्थ प्राप्त कर सकता है। जो उषःकालमें सोता रहेगा वह भोग प्राप्त नहीं कर सकता। अतः उषःकालमें उठकर अपना कार्य शुरू करना चाहिये। यह इस मंत्रका बोध है।

१ '**कं नक्षसे?**' किसके पास तू जाती है? अर्थात् जो उषःकालमें उठता है, अपना कार्य शुरू करता है, उसको भोगके पदार्थ देनेके लिये उसके पास उषा जाती है, कार्यकर्ताको उषा धन देती है। अतः उषःकालके पूर्व उठकर कार्य शुरू करना चाहिये यह इसका आशय है।

२ **वयं हि ते आ आन्तात् आ पराकात् अमन्महि**— हम सब समीपसे और दूरसे उषाका स्तोत्र गाते हैं, उषाकी ओर देखते हैं, उषाका वर्णन करते हैं, उषाके प्रकाशसे प्रकाशित होते हैं, उषःकालके पूर्व उठकर अपना कर्तव्य करते हैं।

### धनका दान

३ **त्वं वाजेभिः आगहि**— हे उषा! तू उन अन्नोंके साथ आओ और '**अस्मे रयिं निधारय**'—हमे धन दो। क्योंकि हम उषःकालके पूर्व उठे हैं और उषाके प्रकाशका ध्यान कर रहे हैं। इसलिये हमें अन्न और धन मिलना चाहिये। यह अन्न और धन हमें मिला, तो उसका उपयोग **करके हम** यज्ञ करेंगे, जिससे विश्वका हित होगा।

### तरुण कुमारीका आदर्श

उषाका वर्णन 'तरुणी' का वर्णन है, यह द्युलोककी पुत्री है। द्यु पिता है, पृथ्वी माता है, इनसे उषा कन्याका जन्म हुआ है। द्यावापृथिवीकी यह पुत्री है। द्यावापृथिवी श्रेष्ठ देवताएं हैं, उन दिव्य देवताओंकी यह दिव्य तेजस्विनी और यशस्विनी पुत्री है। आगेके सूक्तोंमें पाठक इसी उषा देवताका वर्णन देख सकते हैं। इन वर्णनोंमें दिव्य कन्याका आदर्श पाठक देख सकते हैं।

## प्रस्कण्व ऋषिका उषावर्णन

( ऋ० १।४८।१-१६ )

प्रस्कण्वः काण्व । उषाः । प्रगाथः ।

४ सह वामेन न उषो व्युच्छा दुहितर्दिवः ।
सह द्युम्नेन बृहता विभावरि राया देवि दास्वती ॥ १ ॥

५ अश्वावतीर्गोमतीर्विश्वसुविदो भूरि च्यवन्त वस्तवे ।
उदीरय प्रति मा सूनृता उषश्चोद राधो मघोनाम् ॥ २ ॥

६ उवासोषा उच्छाच्च नु देवी जीरा रथानाम् ।
ये अस्या आचरणेषु दध्रिरे समुद्रे न श्रवस्यवः ॥ ३ ॥

७ उषो ये ते प्र यामेषु युञ्जते मनो दानाय सूरयः ।
अत्राह तत् कण्व एषां कण्वतमो नाम गृणाति नृणाम् ॥ ४ ॥

८ आ घा योषेव सूनर्युषा याति प्रभुञ्जती ।
जरयन्ती वृजनं पद्वदीयत उत्पातयति पक्षिणः ॥ ५ ॥

---

४ हे ( दिव. दुहितः उषः ) स्वर्गकन्ये उषा देवी ! ( वामेन सह नः व्युच्छ ) उत्तम धनके साथ हमारे लिये काशित होती रह । हे ( विभावरि देवी ) तेजस्वीनी देवी ! ( बृहता द्युम्नेन सह ) बडे तेजस्वी धनके साथ प्रकाशित ोओ और हे उषा ! ( दास्वती ) दान देनेवाली तू ( राया ) बडे वैभवसे प्रकाशित हो जाओ ॥ ( १ )

५ ( अश्वावतीः गोमतीः ) घोडोंवाली और गौवोंवाली तथा ( विश्व सु-विदः ) सब प्रकारके धनको प्राप्त करानेवाली षाएँ ( वस्तवे भूरि च्यवन्त ) प्रजाजनोंके निवासको हितकारी करनेके लिये बहुत प्रकारसे प्रकाशित हो चुकी हैं । ( मा ति सूनृता उदीरय ) ऐसी तू मेरे लिये हितकारी वाणी बोल । हे ( उषः ) उषा ! ( मघोनां राधः चोद ) धनवानोंके ोग्य धन हमारे पास भेज ॥ ( २ )

६ जो ( उषाः देवी उवास ) उषा देवी पहिले भी निवास कर चुकी थी ( रथानां जीरा ) वह रथोंको चलानेवाली षा ( च नु उच्छात् ) और भी प्रकाशती रहे । ( श्रवस्यवः समुद्रे न ) धनकी इच्छा करनेवाले लोग जिस तरह समुद्रमें ौकाएं चलाते हैं, उस तरह ( ये अस्याः आचरणेषु दध्रिरे ) जो रथ इस उषाके आगमनके समय तैयार रखे रहते हैं उन थोंको उषा चलाती है ॥ ( ३ )

७ हे ( उषः ) उषा देवी ! ( ते यामेषु ) तेरे आगमनके समय ( ये सूरयः ) जो विद्वान् ( मनः दानाय प्र युञ्जते ) पना मन धनादिका दान करनेमें लगा देते हैं, ( एषां नृणां ) इन मनुष्योंके ( कण्वतमो नाम कण्वः ) अत्यंत बुद्धि- ान करके जो प्रसिद्ध है वह कण्व ऋषि ( अत्र अह गृणाति ) यहां ही स्तोत्र गाता है ॥ ( ४ )

८ ( सू-नरी योषा इव ) उत्तम गृहिणी स्त्रीके समान ( प्रभुञ्जती उषाः ) विशेष रीतिसे सबका पालन करनेवाली षा ( घ आ याति ) आ रही है । वह ( वृजनं जरयन्ती ) बलवान् बना देती है ( पद्वत् ईयते ) पांववालोंको चलाती ौर ( पक्षिण. उत्पातयति ) पक्षियोंको उडाती है ॥ ( ५ )

९ वि या सृजति समनं व्य१र्थिनः पदं न वेत्योदती ।
वयो न किष्टे पप्तिवांस आसते व्युष्टौ वाजिनीवति ॥ ६ ॥
१० एषायुक्त परावतः सूर्यस्योदयनादधि ।
शतं रथेभिः सुभगोषा इयं वि यात्यभि मानुषान् ॥ ७ ॥
११ विश्वमस्या नानाम चक्षसे जगज्ज्योतिष्कृणोति सूनरी ।
अप द्वेषो मघोनी दुहिता दिव उषा उच्छदप स्रिधः ॥ ८ ॥
१२ उष आ भाहि भानुना चन्द्रेण दुहितर्दिवः ।
आवहन्ती भूर्यस्मभ्यं सौभगं व्युच्छन्ती दिविष्टिषु ॥ ९ ॥
१३ विश्वस्य हि प्राणनं जीवनं त्वे वि यदुच्छसि सूनरि ।
सा नो रथेन बृहता विभावरि श्रुधि चित्रामघे हवम् ॥ १० ॥
१४ उषो वाजं हि वंस्व यश्चित्रो मानुषे जने ।
तेना वह सुकृतो अध्वराँ उप ये त्वा गृणन्ति वह्नयः ॥ ११ ॥

---

९ ( या स-मनं विसृजति ) जो मननशील पुरुषोंको कार्य करनेके लिये प्रेरित करती है, ( अर्थिनः वि ) धनेच्छुओंको जो प्रेरित करती है तथा ( ओदती पदं न वेति ) जीवन देनेवाली यह उषा एक स्थानपर स्थिर नहीं रहती । हे ( वाजिनीवति ) वैभवसंपन्न उषा देवी ! ( ते व्युष्टौ ) तेरे प्रकाशित होनेपर ( पप्तिवांसः वयः ) उडनेवाले पक्षी भी ( न किः आसते ) बैठे नहीं रहते ॥ ( ६ )

१० ( एषा ) यह उषा ( परावतः सूर्यस्य उदयनात् अधि ) दूरसे सूर्यके उदयके पूर्व ही ( अयुक्त ) अपने रथोंको जोतती है । ( इयं सुभगा उषा ) यह उत्तम भाग्यवाली उषा ( मानुषान् अभि ) मनुष्योंके प्रति ( शतं रथेभिः वि याति ) सेकडों रथोंसे जाती है ॥ ( ७ )

११ ( विश्वं जगत् ) सब जगत् ( अस्याः चक्षसे ननाम ) इस उषाको देखते ही नमस्कार करता है क्योंकि यह ( सु-नरी ) उत्तम संचालन करनेवाली उषा ( ज्योतिः कृणोति ) प्रकाश करती है । ( मघोनी दिवः दुहिता उषाः ) ऐश्वर्यवाली यह स्वर्गीय कन्या यह उषा ( स्रिधः द्वेषः अप अप उच्छत् ) हिंसक शत्रुओंको दूर करती है ॥ ( ८ )

१२ हे ( दिवः दुहितः उषः ) स्वर्गकन्ये उषा देवि ! ( चन्द्रेण भानुना आ भाहि ) तू आल्हाददायक प्रकाशसे प्रकाशित हो । ( दिविष्टिषु व्युच्छन्ती ) दिनोंके इष्टीके समय अन्धकारको दूर करती हुई ( अस्मभ्यं भूरि सौभगं आवहन्ती ) हमारे लिये विपुल सौभाग्य ले आओ ॥ ( ९ )

१३ हे ( सु-नरि ) उत्तम नेतृत्व करनेवाली उषा देवी ! ( यत् वि उच्छसि ) जब तू अन्धकार दूर करती है, तब (त्वे हि विश्वस्य प्राणनं जीवनं) सब विश्वका प्राण और जीवन तेरे अन्दर ही रहता है । हे (चित्रामघे वि-भा-वरि) विलक्षण धनवाली तेजस्वीनी उषा देवि ! ( सा ) वह तू ( बृहता रथेन ) अपने बडे रथसे आ और ( नः हवं श्रुधि ) हमारी प्रार्थनाका श्रवण कर ॥ ( १० )

१४ हे ( उषः ) उषा ! ( यः मानुषे जने चित्रः ) जो मानवी लोगोंमें विलक्षण अन्नधन है, ( वाजं वंस्व हि ) उस अन्नधनका तुम स्वीकार कर, यज्ञमें दिये हुए अन्नभागका स्वीकार कर । तथा ( ये वह्नयः त्वा गृणन्ति ) जो याजक तेरी स्तुति गाते हैं, ( तेन सुकृतः अध्वरान् उप वह ) उनसे संतुष्ट होकर पुण्य कर्म करनेवालोंको यज्ञोंके समीप ले आओ ॥ ( ११ )

१५ विश्वान् देवाँ आ वह सोमपीतयेऽन्तरिक्षादुषस्त्वम् ।
सास्मासु धा गोमदश्वावदुक्थ्य१मुषो वाजं सुवीर्यम् ॥ १२ ॥
१६ यस्या रुशन्तो अर्चयः प्रति भद्रा अदृक्षत ।
सा नो रयिं विश्ववारं सुपेशसमुषा ददातु सुग्म्यम् ॥ १३ ॥
१७ ये चिद्धि त्वामृषयः पूर्व ऊतये जुहूरेऽवसे महि ।
सा नः स्तोमाँ अभि गृणीहि राधसोषः शुक्रेण शोचिषा ॥ १४ ॥
१८ उषो यदद्य भानुना वि द्वारावृणवो दिवः ।
प्र नो यच्छतादवृकं पृथु च्छर्दिः प्र देवि गोमतीरिषः ॥ १५ ॥
१९ सं नो राया बृहता विश्वपेशसा मिमिक्ष्वा समिळाभिरा ।
सं द्युम्नेन विश्वतुरोषो महि सं वाजैर्वाजिनीवति ॥ १६ ॥

( ऋ० १।४९।१-४ )

( प्रस्कण्वः काण्व । उषाः । अनुष्टुप् )

२० उषो भद्रेभिरागहि दिवश्चिद्रोचनादधि ।
वहन्त्वरुणप्सव उप त्वा सोमिनो गृहम् ॥ १ ॥

---

१५ हे ( उषः ) उषा ! ( त्वं ) तू ( सोमपीतये ) सोम पानके लिये ( विश्वान् देवान् अन्तरिक्षात् आ वह ) सब देवोंको अन्तरिक्षसे ले आओ। हे ( उषः ) उषा ! ( सा ) वह तू ( गोमत् अश्ववत् उक्थ्यं सुवीर्यं वाजं ) गौओं और घोडोंसे समृद्ध प्रशंसनीय वीर्य बढानेवाला अन्न बल तथा उत्तम वीर्य ( अस्मासु धा ) हमारे अन्दर धारण कर ॥ ( १२ )

१६ ( यस्याः रुशन्तः अर्चयः ) जिस उषाके शत्रुनाशक तेजस्वी किरण ( भद्राः ) कल्याणकारी हैं ऐसे ( प्रति अदृक्षत ) दीख रहे हैं। ( सा उषाः ) वह उषा ( नः ) हमें ( विश्ववारं सुपेशसं सुग्म्यं रयिं ) सबके स्वीकार करने योग्य सुंदर और सुखकारक धन ( ददातु ) देवे ॥ ( १३ )

१७ हे ( महि उषः ) श्रेष्ठ उषा ! ( त्वां ये चित् हि ) तुम्हारी जो कोई ( पूर्वे ऋषयः ) प्राचीन ऋषि ( ऊतये अवसे जुहूरे ) संरक्षण और अन्न प्राप्तिके लिये प्रार्थना करते थे, ( सा ) वह तू ( राधसा शुक्रेण शोचिषा ) सिद्धि, वीर्य और तेजसे युक्त होकर ( नः स्तोमान् अभि गृणीहि ) हमारे स्तोत्रोंकी प्रशंसा कर ॥ ( १४ )

१८ हे ( उषः ) उषा ! ( यत् अद्य ) जब तूने आज ( भानुना ) अपने प्रकाशसे ( दिव. द्वारौ ऋणवः ) द्युलोकके दोनों द्वार खोल दिये हैं, ( नः अवृकं पृथु छर्दिः ) तब हमें अहिंसक विस्तीर्ण तेजस्वी घर रहनेके लिये ( प्र यच्छतात् ) दे दो। हे देवि उषा ! तथा ( गोमतीः इषः प्र ) गोदुग्धादि युक्त अन्न हमें प्राप्त हों ॥ ( १५ )

१९ हे ( उषः ) उषा ! ( बृहता विश्वपेशसा राया ) बडे अत्यंत सुंदर धनसे ( नः सं मिमिक्ष्व ) हमें संयुक्त कर, तथा ( इळाभिः सं आ ) गौओंसे युक्त कर। हे ( वाजिनीवति महि उषः ) अन्नवाली श्रेष्ठ उषा ! ( विश्वतुरा द्युम्नेन सं ) शत्रुनाशक तेजस्वी धनसे हमें युक्त कर। तथा ( वाजैः सं ) अन्नों और बलोंसे हमें युक्त कर ॥ ( १६ )

२० हे ( उषः ) उषा ! ( दिवः रोचनात् चित् अधि ) द्युलोकके तेजस्वी स्थानसे ( भद्रेभिः आ गहि ) कल्याण करनेवाले मार्गोंसे इधर आओ। ( अरुण-प्सवः ) अरुण वर्णके घोडे ( त्वा सोमिनो गृहं ) तुझे सोमयाजकके घर ( उप वहन्तु ) पहुंचा देवें ॥ ( १ )

२१ सुपेशसं सुखं रथं यमध्यस्था उषस्त्वम् ।
तेना सुश्रवसं जनं प्रावाद्य दुहितर्दिवः ॥ २ ॥
२२ वयश्चित्ते पतत्रिणो द्विपच्चतुष्पदर्जुनि ।
उषः प्रारन्नृतूँरनु दिवो अन्तेभ्यस्परि ॥ ३ ॥
२३ व्युच्छन्ती हि रश्मिभिर्विश्वमाभासि रोचनम् ।
तां त्वामुषर्वसूयवो गीर्भिः कण्वा अहूषत ॥ ४ ॥

---

२१ हे ( उष. ) उषा ! ( त्वं यं सुपेशसं सुखं रथं ) तू जिस सुन्दर सुखदायी रथपर ( अध्यस्थाः ) बैठी है। हे ( दिवः दुहितः ) स्वर्गीय कन्ये ! ( तेन ) उस रथसे ( अद्य सुश्रवसं जनं ) आज उत्तम अन्नवाले मनुष्यका ( प्र अव ) विशेष रक्षण कर ॥ ( २ )

२२ हे ( अर्जुनि उषः ) गौरवर्णवाली उषा ! ( ते ऋतून् अनु ) तुम्हारे आगमनके अनुसार ( द्विपत् चतुष्पत् ) द्विपाद मनुष्य, चतुष्पाद पशु और ( पतत्रिणः वयः चित् ) उडनेवाले पक्षी ( दिवः अन्तेभ्यः परि ) द्युलोकके अन्ततक तेरा स्वागत करनेके लिये ( प्र- आरन् ) उडते हैं ॥ ( ३ )

२३ हे ( उषः ) उषा देवी ! ( व्युच्छन्ती ) अन्धकारको दूर करनेवाली तू ( रश्मिभिः विश्वं रोचमानं ) अपने किरणोंसे सब विश्वको तेजस्वी करके ( आ भासि ) प्रकाशित करती है। ( तां त्वां ) उस तुझको ( वसूयवः कण्वाः ) धनकी इच्छा करनेवाले ज्ञानी कण्व ऋषि ( अहूषत ) बुलाते हैं ॥ ( ४ )

---

## कण्व कुलोत्पन्न प्रस्कण्व ऋषिका

# उषाका वर्णन

### ऋषिका नाम

इन मंत्रोंमें ' **७ कण्वतमः कण्व गृणाति** '- कण्वोंमें श्रेष्ठ कण्व अर्थात् प्रस्कण्व ऋषि स्तुति करता है ऐसा ( १।४८। ४ में ) कहा है। तथा ' **१३ वसूयवः कण्वाः अहूषत** '- धनकी इच्छा करनेवाले कण्व ऋषि स्तुति करते हैं। इस तरह इन मंत्रोंमें कण्व ऋषिका तथा कण्व गोत्रवालोंका नाम आया है। कईयोंकी संमति यह है कि ' **कण्व** ' पद ' कण् ' धातुसे बनता है, इस कारण ' स्तुति करनेवाला, प्रवचनकार ' ऐसा इसका अर्थ है। ' **कण्वतमः** ' का अर्थ प्रवचन करनेवालोंमें श्रेष्ठ विद्वान्। इस तरह अर्थ माननेसे किसी व्यक्तिका संबंध इन सूक्तोंसे नहीं होता।

हमने वसिष्ठ मंत्रोंमें वासिष्ठोंके नाम देखे और यहां हम कण्वके नाम देखते हैं। इस विषयमे दोनों संमतिया हमने पाठकोंके सामने रखीं है। इसका अधिक विचार पाठक करें।

### उषाके विशेषण

' उषा, उषस् ' इन पदोंका अर्थ ' प्रकाशनेवाली ' है। यह सदा तेजस्वीनी है, अन्धकार दूर करती है और लोगोंको प्रकाश बताकर मार्गदर्शन करती है। जनताको कार्य करनेमें प्रयुक्त तथा प्रेरित करती है।

इस उषाका प्रमुख नाम ' **दिवः दुहिता** ' है। अनेक वार ये ही उषाके वर्णनमें पद आगये हैं। द्युलोककी यह पुत्री है। यह स्वर्गीय कन्या है, दिव्य पुत्री है। घरमें पुत्री कैसी होनी चाहिये। इसका उत्तर यह है कि ' **उषाके समान आर्योंके घरकी पुत्री** ' होनी चाहिये। उषा आदर्श है पुत्रीके लिये। स्वर्गीय कन्याका अर्थ ही आदर्शकन्या है।

यह ' **देवी** ' है। देवी प्रकाशनेवालीको कहते हैं। तेजस्वी होनेसे देवी कहलाती है। आर्योंके घर पुत्रियोंसे तेजस्वी होने

चाहिये। ' **विभावरी** ' का भी यही अर्थ है, ( वि ) विशेष रीतिसे ( भा ) प्रकाश करनेमें ( वरी ) श्रेष्ठ जो होती है। यह कन्याका तेजस्वी होना सूचित करता है।

' **अर्जुनी** ' यह इसका नाम इसके प्रकाशमान होनेकी सूचना देता है। श्वेतवर्णवाली गौरवर्णवाली उषा सूर्योदयके पूर्व होती है। इस समय इसका नाम ' अर्जुनी ' होता है।

## घरका नेतृत्व करनेवाली तरुणी '

' **सू-नरी** ' का अर्थ ' सुंदरी ' है अथवा ' उत्तम नेतृत्व करनेवाली ' है। जब कन्या प्रौढ होती, पुरुषके साथ विवाह करने योग्य हो जाती है, तब वह घरका उत्तम नेतृत्व कर सकती है और उस समय वह यौवनसंपन्न होनेके कारण ' सुंदरी ' भी कही जा सकती है। ' **चित्र-मघा** ' इस समय उसका सौंदर्य विलक्षण आश्चर्यकारक होता है। वह ( मघा ) बडी भी होती है और विलक्षण आभूषण भी धारण करती है। अतः विशेष सुंदर दीखती है। इस समय यह ' **मही** ' अर्थात् ' बडी ' कहलाती है। यह कुमारी नहीं, कन्या नहीं परंतु यौवनमें बढनेवाली अतः ( मही ) बडी कहलाती है। इसी समय यह सब घरका नेतृत्व करती है। यह ऐसी सुयोग्य समझी जाती है कि पति इस पर अपना घरका सब कार्य छोड-कर आनन्दसे अन्य कार्यमें दत्तचित्त हो सकता है।

इतनी इसकी योग्यता होनेके कारण यह इस समय ' **वाजिनीवती** ' अर्थात ' अन्नवाली ' कहलाती है। इसके अर्थ ' अन्नवाली, बलवाली, ओजस्विनी ' आदि होते है।

यह उषा गौरवर्ण है, तेजस्विनी है, बल बढानेवाला अन्न तैयार करनेकी विद्या यह जानती है। अन्न शीघ्र पच जाय और खानेवालेका बल बढावे ऐसा अन्न तैयार करनेकी विद्या यह जानती है। यह लाल, पीला आदि अन्न रंगोंके चमकीले वस्त्र पहनती है, अपनी सुंदर रूप और कान्ति बढाती है और अधिकाधिक सुंदर बनती जाती है।

आर्यकन्या ऐसी बननी चाहिये। रूपवती, तेजस्वी, सत्कर्म प्रवृत्त, सुन्दर वस्त्र धारिणी, अपने सौंदर्यको बढानेवाली, लोगोंका चित्त अपने सद्भावसे अपनी ओर आकर्षित करनेवाली, सत्प्रवृत्त, सद्वृत्त, लोगोंको सत्कर्ममें प्रवृत्त करनेवाली दिव्य प्रवृत्ती बढानेवाली ऐसी आर्यकन्या होनी चाहिये। इस विषयका वर्णन और देखिये—

## उषाका वर्णन

**४ हे उष ! वामेन सह, द्युम्नेन सह, बृहता राया सह व्युच्छ** ( १।४८।१ )- हे उषा ! उत्तम प्रिय सुन्दर, तेजस्वी विशाल धनके साथ प्रकाशित हो। अन्धकारको दूर करो। यहा ' वाम ' पद बडा महत्त्वका है। ' प्रिय, सुन्दर, आदरणीय, रमणीय, अपने पास रखने योग्य, स्त्रियोंके आभूषण के लिये योग्य ' ये अर्थ ' वाम ' के है। धन ऐसा हो जो स्त्रियोंके साथ रहना योग्य है। इस धनका ' **दास्वती** ' दान वह करे।

**५ अश्वावतीः गोमती विश्वसुविदः वस्तवे भूरि च्यवन्त** ( १।४८।२ )— घोडोंवाली तथा गौओंवाली सब धनको प्राप्त करनेवाली उषाएं निवास करनेवाले मनुष्योंका हित करनेके लिये प्रकाशित हो रही है। उषा प्रकाशती है, लोगोंको प्रकाश मिलता है जिससे उनको जीवन रस मिलता है। उषा न आगयी तो मनुष्य सूर्य प्रकाशसे वंचित रहेंगे। ' **विश्व-सु-विदः** ' सबको सुख प्राप्त होता है वह उषाके आनेके कारण है। यह उषा ( अश्वावती ) घोडोवाली और ( गोमती ) गौओंवाली है अर्थात् उषःकालमें वीर घोडोंपर सवार होते हैं और बाहर जाते हैं, इसलिये उषाके साथ घोडोंका संबंध है और यह उषा गौओंवाली भी है। उषाके समय गौओं-का दोहन किया जाता है, गौओंसे दूध निकालते है और चरने-के लिये बाहेर गौवें जाती है। उषःकालमें ही चारों ओरकी गौवे बाहर आती हुई दीखती हैं। उषःकालमें गौओंका दोहन होता है, इसलिये उषा ही गौओंका दोहन करती है, वह स्वर्गकन्या गौओंका दोहन करती है। उषःकालमें गौओंका दोहन होना चाहिये और गौका दोहन करना दुहिताका पुत्रीका कार्य है, घरकी पुत्री गायोंका दोहन करे। पुत्री दोहन करने-वाली है इस कारण ' **दुहिता** ' कहलाती है।

**मघोनां राधः चोद**- धनवानोंके धनोको दानके लिये प्रेरित कर। धन धनवानोंके कोशमें बंद न रहें। वह बाहर आजाय और जनताके हितके लिये किये जानेवाले यज्ञकर्मोंमें धनोंका व्यय हो।

**सूनृता उदीरय**— अच्छा हितकारी, शुभ भाषण बोल। बोलना हो तो शुभ भाषण बोल। अहितकारी भाषण कोई न बोले। कल्याण जिससे होगा ऐसा ही भाषण कर। पुत्री क्या बोले ? इसका उत्तर सूनृत, सत्य, सुन्दर, मीठा भाषण

बोले। कन्याओंको इस तरहका बोलना सिखाया जाय यह इस मंत्रसे बोध मिलता है।

कन्या गौका दोहन करे, रथको घोडे जोतकर अथवा घोडेपर सवार होकर सवेरे ही बाहर जाय, सबको धन प्राप्त करनेके कार्यमें लगा देवे, स्वयं भी ऐसे कार्य करे। रहने सहनेके सुख साधन बढावे, धनोंका शुभ कार्यमें व्यय करे और हितकारी भाषण करे।

**६ रथानां जीरा उषा देवी उवास उच्छात् च-** (१।४८।३)- रथोंका संचालन करनेवाली उषा देवी उदित होचुकी और प्रकाशने लगी है। इस तरह पुत्री उषःकालमें उठे और रथको जोतकर भ्रमण करे। पुत्रीका प्रकाश इस तरह चारों ओर हो। चारों ओरके मनुष्य इसकी प्रशंसा करें।

**श्रवस्यवः समुद्रे दधिरे—** धनकी इच्छा करनेवाले लोग समुद्रमें जैसी नौकाएं डालते हैं, नगरान्तरमें जाकर व्यापार करके धन कमाते हैं, उस तरह यह उषा रथको उषःकालमें जोतती है और सबको कार्य व्यवहारमें प्रवृत्त करती है और धन कमानेके व्यवहार करवाती है।

**ये अस्याः आचरणेषु दध्रिरे—** जो रथ उषाके आनेके समय तैयार रहते हैं, वे उषा आते ही चलाये जाते हैं। अर्थात् उषःकालमें स्त्री पुरुष घोडोंपर अथवा रथोंपर सवार होकर भ्रमणके लिये बाहर जाय, तथा अपने कार्य व्यवसायके लिये लग जांय।

**७ ते यामेषु सूरय. मन. दानाय प्रयुञ्जते, एषां नृणां कण्वः गृणाति** (१।४८।४)- उषाके आनेके समय जो ज्ञानी लोग अपने मनको दानके कार्यमें प्रवृत्त करते हैं उन मनुष्योंमेंसे यह कण्व ऋषि उषाकी स्तुति करता है। अन्योंकी अपेक्षा इसकी स्तुति अधिक अच्छी होती है क्योंकि यह अधिक विद्वान है। विद्वानके स्तोत्र अच्छे होते हैं।

८ यह उषा उत्तम नेतृत्व करनेवाली **(सूनरी योषा)** गृहिणी स्त्री है। पहिले यह कन्या थी, पुत्री थी, छोटी आयुवाली थी। अब यह (सू-नरी योषा) घरका उत्तम नेतृत्व करनेवाली तरुण स्त्री हुई है। अर्थात् कवि ऐसा वर्णन कर रहा है कि यह तरुणी पतिके घर जाकर पतिके घरका उत्तम रीतिसे संचालन कर रही है। **(प्रभुञ्जती)** यह उत्तम अन्न तैयार करके घरके लोगोंको खिलाती है। तरुण स्त्री उत्तम अन्न तैयार करके घरके लोगोंको खिलाती और उनको बलवान बनाती है। **(वृजनं जरयन्ती)** बलवान बना देती, चपल बना देती है, वृद्ध अर्थात् दीर्घायु बना देती है। उत्तम अन्नसे यह होता है। घरमें जो तरुण स्त्री हो वह अपने घरमें ऐसा व्यवहार करे।

**पद्वत् ईयते, पक्षिणः उत्पातयति- यह** उषा पांववालोंको, मनुष्यों और पशुओंको उठाती और कार्यमें प्रवृत्त करती है, और पक्षियोंको अपने घोंसलोंसे बाहर आकर उडनेमें प्रवृत्त करती है। इसी तरह घरकी स्त्री सबसे प्रथम उठे, घरमें दीवे जलावे, प्रकाश करे, पशु और मनुष्योंको जगावे और उनको कार्यमें प्रवृत्त करे।

पतिके घर पहुंचने पर तरुण स्त्री क्या करे, इसका उपदेश इस मंत्रमें है।

**९ समनं विसृजति—** वह उषा मननशील पुरुषोंको कार्य करनेके लिये प्रवृत्त करती है। **अर्थिनः विसृजति-** धन चाहनेवाले कार्यकर्ताओंको उनके कार्य करनेके लिये प्रेरित करती है।

**ओदती पदं न वेति—** यह नवजीवन देनेवाली उषा अपने स्थानपर बैठकर आलस्यमें रहना जानती नहीं। अर्थात् यह अपने घरके कार्योंमें दक्ष और तत्पर रहती है। सदा कार्य करती और दूसरोंसे करवाती रहती है।

**ते व्युष्टौ पप्तिवांसः वयः न किः आसते—** उषा प्रकाशित होनेपर उडनेवाले पक्षी एक स्थानपर बैठे नहीं रहते। उषा स्वयं आलस्यमें नहीं रहती और दूसरोंको भी आलस्यमें रहने नहीं देती।

**१० एषा सूर्यस्य उदयनात् अयुक्त—** यह उषा सूर्यके उदय होते ही रथको जोतकर अपने कार्यको करनेके लिये जाती है। यह **'सुभगा उषा मानुषान् शतं रथेभिः अभि वियति—** यह भाग्यवाली उषा मनुष्योंके पास रथोंमें बैठकर जाती है और उनसे कार्य करवा लेती है। तरुण स्त्री रथ जोतकर अपना कार्य करे, दूसरोंको कार्यमें लगावे और किसीको भी आलस्यमें रहने न दे। सब कर्तव्य तत्पर होकर स्वयं करे और सबसे कार्य करावे। स्वयं उद्यमी बनकर दूसरोंको उद्यमी बना देवे। घरकी स्वामिनी ऐसी हो।

**११ अस्याः चक्षसे विश्वं जगत् नमाय—** इसके दर्शनसे इसके सन्मुख सब जगत् इसको प्रणाम करता है। इस

तरुणीका प्रभाव लोगोंपर ऐसा पडता है कि वे इसके सामने आदरसे नतमस्तक होते है। सब लोग ऐसा कर्म करने करवानेमें कुशल तरुणीका आदर करें। वैदिक समयकी तरुणीकी ऐसा योग्यता रहती थी। कोई पुरुष इसका अपमान करनेके लिये प्रवृत्त नहीं होता था। सब इसके सामने सिर झुकाकर इस तरुणीका आदर करते थे।

## शत्रुको दूर करे

**उषा ज्योतिः कृणोति, स्त्रिधः द्वेषः अपउच्छात्**- उषा अपने घरमें प्रकाश करती है और उससे हिसक शत्रुओंको दूर कर देती है। तरुणी स्त्री अपने घरमें उषःकालमें उठे, कमरोंको प्रकाशित करे और हिंसकों और द्वेष करनेवाले शत्रुओंको दूर करे।

इस उपदेशसे पता चलता है कि कुमारीकाओं और तरुणियोंको स्वसंरक्षण और गृहसंरक्षण करनेकी शिक्षा मिलनी चाहिये। ऐसी तरुणी स्वसंरक्षण करनेमें और अपने घरका संरक्षण करनेमें समर्थ होती है। घरमें हिंसक शत्रु आजाय, तो वह न डरे, पर उनको घरसे भगा देवे। इतनी प्रभावी तरुणी हो। आर्य तरुणीका यह आदर्श है।

१२ **हे उषः! चन्द्रेण भानुना आभाहि**— हे उषा आल्हादकारक प्रकाशसे प्रकाशित होती रह। तुम्हारी प्रसिद्धि आनंद बढानेवाली हो।

**दिविष्टिषु व्युच्छन्ती**— देवयज्ञोंमें प्रकाश करो, यज्ञके समय उत्तम प्रकाश हो।

**अस्मभ्यं भूरि सौभगं आवहन्ती**— हमारे लिये बहुत ऐश्वर्य ले आओ। सौभाग्य, ऐश्वर्य, धन आदि हमें चाहिये।

१३ **हे सूनरि! यत् व्युच्छसि, त्वे विश्वस्य प्राणनं जीवनं**-हे उत्तम नेतृत्व करनेवाली उषा! जो तुम्हारा प्रकाशीत होना है, उस प्रकाशमें सब विश्वका प्राण और जीवन है। उषासे सूर्यका प्रकाश मिलता है वह सब स्थिरचरको जीवन देनेवाला है। अतः कहा है—

**सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च।** ऋ०

'सूर्य स्थावर जंगमका आत्मा है।' सूर्य किरणोंमें जीवन रहता है उससे स्थावर जंगमके सब पदार्थ जीवनमय हो जाते हैं। उषाके आनेसे इस सूर्य प्रकाशके मिलनेकी संभावना हो जाती है। यह उषाका महत्त्व है। घरकी तरुणी अपने सात्त्विक प्रकाशसे प्रकाशित होती रहे, यज्ञशालामें प्रकाश करे, सर्वत्र सौंदर्य बढावे। सबको नवजीवन देवे।

**बृहता रथेन**- बडे रथमें बैठकर उषा यज्ञस्थानमें आ जावे और वहाका स्थान प्रकाशित करे।

१४ **य मानुषे जने चित्रः, वाज वस्व**— जो मानवोंके पास उत्तम विलक्षण धन होगा, उस बलवर्धक अन्नादि धनको प्राप्त कर और वैसा धन हमें दे दो।

**ये वह्नयः त्वा गृणन्ति, तेन सुकृत अध्वरान् उपवह**—जो स्तोत्रपाठक तेरी स्तुति करते हैं, उस स्तुतिको सुननेके लिये सत्कर्म करनेवालोंके यज्ञोंके पास तू जा। 'वह्नि' का अर्थ 'अग्नि' है। 'वहन करनेवाला' ऐसा इसका मूल धात्वर्थ है। इसलिये 'घोडा, बैल, वाहनका साधन' ऐसा भी इसका अर्थ होता है। 'सुकृत करनेवालोंके यज्ञस्थानमें पहुंचानेवाले वाहन' ऐसा यहां भाव अभीष्ट है। उषा लोगोंको यज्ञशालामें पहुंचाती है, क्योंकि उषःकालमें याजक यज्ञका कार्य शुरु करते हैं। घर घरमें तरुण स्त्री हवन करे यह इस मंत्रका बोध है।

१५ **हे उषा! गोमत् अश्ववत् उकथ्यं वाजः सुवीर्य अस्मासु धाः** (१।४८।१२)— हे उषा! तू गौओंवाला तथा घोडोंवाला प्रशंसनीय अन्न जो उत्तम वीर्य शरीरमें उत्पन्न करता है, वैसा अन्न हमें दे। वैसा बल दे। गौवें दूध दही मक्खन घी आदि पदार्थ देती हैं, घोडे बाहेरके प्रदेशसे अन्नादि पदार्थ लाते हैं। ये पदार्थ खानेसे उत्तम संतान निर्माण करनेवाला वीर्य शरीरमें उत्पन्न होता है। ऐसा वीर्य हमारे शरीरमें बढे और हमें उत्तम बलवाली संतान हो।

१६ **यस्या रुशन्तः अर्चयः भद्राः प्रति अदृश्रन, सा उषाः नः विश्ववारं सुपेशसं सुगम्यं रयिं ददातु**— जिस उषाके किरण सुन्दर और कल्याण करनेवाले हैं, वह उषा मनुष्योंको स्वीकारने योग्य सुंदर सुखदायी धन हमें देवे।

१७ **हे महि! ये पूर्वे ऋषयः त्वां ऊतये अवसे जुहुरे, सा त्वं राधसा शुक्रेण शोचिषा नः स्तोमान् अभिगृणीहि**— हे श्रेष्ठ उषा देवि! प्राचीन श्रेष्ठ ऋषि अपनी सुरक्षाके लिये तुम्हारी प्रार्थना करते रहे, वह तू उत्तम तेजस्वी सिद्धिके साथ हमारे यज्ञोंके संबंधका उत्तम वर्णन कर।

हमारे शुभ कर्मकी प्रशंसा कर। जिससे हमें अधिक शुभकर्म करनेकी उत्तेजना मिले।

१८ हे उषः ! अद्य भानुना दिवः द्वारौ ऋणव, न अवृकं पृथु छर्दिः गोमतीः इषः प्रयच्छतात्।- हे उषा ! आज तूने अपने प्रकाशसे द्युलोकके दोनों द्वार खोल दिये हैं, अब हिंसा जहां नहीं होती ऐसे विशाल घर और गौवोंके साथ पर्याप्त अन्न हमें प्रदान कर। तरुण स्त्री घरमें प्रातः काल उठे, घरमें प्रकाश करे, घरके द्वार खोले, हिंसक शत्रु आदि दुष्ट वहीं आसपास बैठे हों तो उनको दूर हटा देवे, और अपना घर सुरक्षित करे, गौओंका दोहन करे, दूध दही तैयार करे, पुष्टिकारक अन्न तैयार करे और घरके लोगोंको समय-पर प्रदान करे। यह तरुण स्त्रीका कर्तव्य है।

१९ हे उषः ! बृहता विश्वपेशसा राया, इळाभिः, विश्वतुरा द्युम्नेन, वाजैः नः संमिमिक्ष्व— हे उषा ! विशाल और सबसे सुंदर धनसे, गौओंसे, शत्रुनाशक तेजस्वी धनसे और बलवर्धक अन्नोंसे हमें युक्त कर। इतने पदार्थ हमें चाहिये।

२० हे उषा ! द्युलोकके तेजस्वी स्थानसे हमारे पास प्रतिदिन आ और हमारे घरोंको प्रकाशित कर।

२१ हे उषा ! तूं उत्तम बनाये सुन्दर रथपर बैठ और उत्तम यशस्वी अन्नका दान करनेवाले मनुष्यका संरक्षण कर।

२२ हे उषा ! तुम्हारे आते ही दो पांव वाले, चार पाव-वाले तथा उडनेवाले सब प्राणी उठते हैं और द्युलोकके अन्ततक पक्षीगण सचार करते हैं। चारो ओर आनन्दही आनंद अनुभवमें आने लगता है। ऐसा आनंद देना यह तुम्हाराही गुण है।

२३ हे उषा ! प्रकाशित हो, अन्धेरा दूर कर, अपने किरणोंसे सब विश्वको प्रकाशित कर, कण्व गोत्री लोग अथवा ज्ञानी तुम्हारी प्रशंसा गा रहे हैं अतः हमें सुखी कर, हमारा संरक्षण कर।

# गोतम ऋषिका उषा वर्णन

( ऋ० १।९२।१-१५ )

( गोतमो राहूगण०। उषाः। १-४ जगती, ५-१२ त्रिष्टुप्, १३-१५ उष्णिक् )

२४ एता उ त्या उषसः केतुमक्रत पूर्वे अर्धे रजसो भानुमञ्जते।
निष्कृण्वाना आयुधानीव धृष्णवः प्रति गावोऽरुषीर्यन्ति मातरः ॥ १ ॥
२५ उदपप्तन्नरुणा भानवो वृथा स्वायुजो अरुषीर्गा अयुक्षत।
अक्रन्नुषासो वयुनानि पूर्वथा रुशन्तं भानुमरुषीरशिश्रयुः ॥ २ ॥

२४ ( एताः उ त्याः उषसः ) ये वे उषाएं ( केतुं अक्रत ) प्रकाश कर रहीं हैं। ( रजसः पूर्वे अर्धे ) अन्तरिक्षके पूर्व दिशाके अर्धभागमें ( भानुं अञ्जते ) ये प्रकाश कर रही हैं। ( धृष्णवः आयुधानि निष्कृण्वानाः इव ) प्रतापी वीर अपने शस्त्रोंको चमकदार करते हैं उसके समान ( अरुषीः मातरः गावः प्रति यन्ति ) सब विश्वको प्रकाशित करनेवाली लाल गोमाताएं-लाल सूर्यकिरणें प्रतिदिन आती हैं ॥ ( १ )

२५ ( अरुणाः भानवः वृथा उदपप्तन् ) लाल रंगके तेजस्वी किरण सहजहीसे ऊपर आने लगे हैं। ( सु-आयुजः अरुषीः गाः अयुक्षत ) सहजहीमें इस ज्योतिको ऊपर लानेवाली लाल गौवें अथवा बैल रथके साथ जोते गये हैं। ( उषासः पूर्वथा वयुनानि अक्रन् ) ये उषाएँ पूर्वके समान लोगोंसे कर्मोंको करवाती हैं और अब ( अरुषीः रुशन्तं भानुं अशिश्रयुः ) लाल रंगवाली उषाओंने अधिक तेजस्वी प्रकाश धारण किया है ॥ ( २ )

२६ अर्चन्ति नारीरपसो न विष्टिभिः समानेन योजनेना परावतः ।
इषं वहन्तीः सुकृते सुदानवे विश्वेदह यजमानाय सुन्वते ॥ ३ ॥

२७ अधि पेशांसि वपते नृतूरिवापोर्णुते वक्ष उस्रेव बर्जहम् ।
ज्योतिर्विश्वस्मै भुवनाय कृण्वती गावो न व्रजं व्युषा आवर्तमः ॥ ४ ॥

२८ प्रत्यर्ची रुशदस्या अदर्शि वि तिष्ठते बाधते कृष्णमभ्वम् ।
स्वरुं न पेशो विदथेष्वञ्जञ्चित्रं दिवो दुहिता भानुमश्रेत ॥ ५ ॥

२९ अतारिष्म तमसस्पारमस्योषा उच्छन्ती वयुना कृणोति ।
श्रिये छन्दो न स्मयते विभाती सुप्रतीका सौमनसायाजीगः ॥ ६ ॥

३० भास्वती नेत्री सूनृतानां दिवः स्तवे दुहिता गोतमेभिः ।
प्रजावतो नृवतो अश्वबुध्यानुषो गोअग्राँ उप मासि वाजान् ॥ ७ ॥

---

२६ ( अपसः नारीः न ) कर्ममें कुशल स्त्रियोंके समान ये उषाएँ ( समानेन योजनेन ) एक ही आयोजनासे ( आ परावतः ) दूर प्रदेशतकके भागको ( विष्टिभि. ) किरणोंसे ( अर्चन्ति ) अलंकृत करती है। और ( सुकृते सुदानवे ) सदाचारी उत्तम दाता ( सुन्वते यजमानाय ) सोमयाजी यजमानके लिये ( विश्वा इत् अह ) सब प्रकारका ( इष वहन्तीः ) अन्न लाती हैं ॥ ( ३ )

२७ यह उषा ( नृतूः इव ) नर्तकीके समान ( पेशांसि अधि वपते ) विविध रूपोंको धारण करती है। ( उस्रा इव ) गौके समान ( बर्जहं वक्षः अप ऊर्णुते ) दूधसे भरे अपने वक्ष.स्थलको खुला करती है। ( विश्वस्मै भुवनाय ज्योतिः कृण्वती ) तब जगत्के लिये प्रकाश कर देती है, ( गाव. व्रजं न ) गौवें व्रजको व्यापती हैं उस तरह ये ( उषा तम. वि आवः ) उषाएं अन्धकारको घेरकर प्रकाशको प्रकट करती हैं ॥ ( ४ )

२८ ( अस्या. रुशत् अर्चिः ) इस उषाका तेजस्वी प्रकाश ( प्रति अदर्शि ) प्रतिदिन पूर्व दिशामें दीखता है। यह प्रकाश ( वि तिष्ठते ) सर्वत्र व्यापता है और ( अभ्वं कृष्ण बाधते ) महान् काले अन्धकारको दूर करता है ( विदथेषु स्वरुं न पेशः अञ्जन् ) यज्ञोंमें जैसे यूपको घीसे लीपकर सुशोभित करते हैं, उस तरह ( दिव' दुहिता ) द्युलोककी पुत्री उषा ( चित्रं भानुं अश्रेत् ) विलक्षण प्रकाशको धारण करती है और अधिक सुंदर बनती है ॥ ( ५ ).

२९ ( अस्य तमसः पारं अतारिष्म ) हम इस अन्धकारके पार हो गये हैं। ( उच्छन्ती उषा वयुना कृणोति ) प्रकाशनेवाली उषा सबके कर्मोंको करवाती है। ( श्रिये छन्दः न ) सपत्तिकी प्राप्तिके लिये धनीके साथ उसका छन्दानुवर्ती पुरुष जैसा हंसता है उस तरह ( विभाती ) प्रकाशनेवाली ( सुप्रतीका ) सुन्दर स्त्री ( सौमनसाय ) पतिका मन प्रसन्न करनेके लिये हंसती है वैसी यह उषा हंसती है। उसने हम सबको ( अजीगः ) जगाया अथवा अन्धेरेको निगल दिया है ॥ ( ६ )

३० ( भास्वती ) तेजस्विनी ( सूनृतानां नेत्री ) सत्य भाषणोंको प्रेरित करनेवाली ( दिवः दुहिता ) द्युलोककी पुत्री उषा ( गोतमेभिः स्तवे ) श्रेष्ठ गौतम ऋषियों द्वारा प्रशंसित हुई है। हे ( उषः ) उषा देवि ! तू ( प्रजावत· नृवतः ) सन्तानोंसे और वीरोंसे युक्त ( अश्वबुध्यान् गो-अग्रान् ) घोडों और गौवोंसे युक्त, ऐसे ( वाजान् उप मासि ) अन्नों, बलों और ऐश्वर्योंको हमें देती है ॥ ( ७ )

३१ उषस्तमश्यां यशसं सुवीरं दासप्रवर्गं रयिमश्वबुध्यम् ।
सुदंससा श्रवसा या विभासि वाजप्रसूता सुभगे बृहन्तम् ॥ ८ ॥

३२ विश्वानि देवी भुवनाभिचक्ष्या प्रतीची चक्षुरुर्विया वि भाति ।
विश्वं जीवं चरसे बोधयन्ती विश्वस्य वाचमविदन्मनायोः ॥ ९ ॥

३३ पुनः पुनर्जायमाना पुराणी समानं वर्णमभि शुम्भमाना ।
श्वघ्नीव कृत्नुर्विज आमिनाना मर्तस्य देवी जरयन्त्यायुः ॥ १० ॥

३४ व्यूर्ण्वती दिवो अन्ताँ अबोध्यप स्वसारं सनुतर्युयोति ।
प्रमिनती मनुष्या युगानि योषा जारस्य चक्षसा वि भाति ॥ ११ ॥

३५ पशून्न चित्रा सुभगा प्रथाना सिन्धुर्न क्षोद उर्विया व्यश्वैत् ।
अमिनती दैव्यानि व्रतानि सूर्यस्य चेति रश्मिभिर्दृशाना ॥ १२ ॥

३६ उषस्तच्चित्रमा भरास्मभ्यं वाजिनीवति ।
येन तोकं च तनयं च धामहे ॥ १३ ॥

---

३१ हे ( उषः ) उषा देवि ! ( तं यशसं सुवीरं ) उस यशस्वी वीरोंके साथ रहनेवाले ( दासप्रवर्गं अश्वबुध्यं रयिं ) सेवक वर्गसे और घोडोंसे युक्त धनको ( अश्यां ) हम प्राप्त करें । हे ( सुभगे ) उत्तम भाग्यवाली उषा देवी ! ( सुदंससा श्रवसा ) उत्तम कर्मसे कीर्तिवाली ( वाजप्रसूता ) तथा अन्नकी वृद्धि करनेवाली होकर ( या बृहन्त विभासि ) जिस बडे ऐश्वर्यको प्रकाशित करती है, वह धन भी हमें मिले ॥ ( ८ )

३२ ( देवी ) यह प्रकाशमान उषा ( विश्वानि भुवना अभिचक्ष्य ) सब भुवनोंको देखकर, ( प्रतीची चक्षुः उर्विया विभाति ) पश्चिम दिशामें विशेष प्रकाशसे प्रकाशती है । ( विश्वं जीवं चरसे बोधयन्ती ) सब जीवोंको कार्य करनेके लिये जगाती है । और ( विश्वस्य मनायोः ) सब मननपूर्वक कार्य करनेवाले मानवोंके ( वाचं अविदत् ) वाणीको प्राप्त होती है अर्थात् कवियोंको वर्णनकी स्फूर्ति देती है ॥ ( ९ )

३३ ( पुनः पुनः जायमाना ) पुनः पुनः प्रतिदिन होनेवाली ( पुराणी ) प्राचीन होती हुई नवीन जैसी ( समानं वर्णं अभि शुम्भमाना ) एक ही रूपको प्राप्त करके अत्यंत शोभनेवाली ( देवी ) यह उषा देवी ( मर्तस्य आयुः जरयन्ती ) मनुष्यकी आयु क्षीण करती है । ( कृत्नुः श्वघ्नी इव ) काटनेवाली कुत्तेको मारनेवाली वाघीणके समान ( विजः आमिनाना ) पक्षियोंको काटती है वैसी उषा मानवोंकी आयुको काटती है ॥ ( १० )

३४ ( दिवः अन्तान् ) द्युलोकके अन्तभागोंको ( वि ऊर्ण्वती ) प्रकाशित करनेवाली उषा ( अबोधि ) जाग उठी है । वह ( स्वसारं ) अपनी रात्रीरूपी बहिनको ( सनुतः अप युयोति ) गुप्त प्रदेशोंमें प्रेरित करती है । ( मनुष्या युगानि प्रमिनती ) मानवी आयुष्यके युगोंको विनष्ट करती हुई ( योषा जारस्य चक्षसा ) यह उषारूपी स्त्री जार रूपी सूर्यके प्रकाशसे ( वि भाति ) विशेष प्रकाशती है ॥ ( ११ )

३५ ( चित्रा सुभगा ) विलक्षण शोभासे शोभनेवाली ( पशून् न प्रथाना ) पशुओंके समान चारों ओर फैलती है । वह ( उर्विया व्यश्वैत् ) बडी होकर विश्वभर उस तरह व्यापती है, ( सिन्धुः न क्षोदः ) जिस तरह नदीके पूरसे आया उदक सर्वत्र व्यापता है । ( दैव्यानि व्रतानि अमिनती ) देवताओंके कर्मोंका नाश वह कदापि नहीं करती और ( सूर्यस्य रश्मिभिः दृशाना चेति ) सूर्यके किरणोंसे दीखती हुई यह सबको ज्ञात होती है ॥ ( १२ )

३६ हे ( वाजिनीवति उषः ) समृद्धियुक्त उषा देवि ! ( अस्मभ्यं तत् चित्रं आ भर ) हमारे लिये वह उत्तम वैभव भरपूर दे, ( येन ) जिससे हम ( तोकं तनयं च धामहे ) पुत्रपौत्रोंका धारण करनेमें समर्थ हो जायगे ॥ ( १३ )

३७ उषो अद्येह गोमत्यश्वावति विभावरि ।
रेवदस्मे व्युच्छ सूनृतावति ॥ १४ ॥
३८ युक्ष्वा हि वाजिनीवत्यश्वाँ अद्यारुणाँ उषः ।
अथा नो विश्वा सौभगान्या वह ॥ १५ ॥

---

३७ हे ( गोमति अश्वावति ) गौओं और घोडोंवाली ( विभावरि ) तेजस्विनी ( सूनृतावति ) प्रिय तथा सत्य भाषण बोलनेवाली ( उषः ) उषा देवि ! ( अद्य इह अस्मे ) आज यहां हमारे लिये ( रेवत् वि उच्छ ) धनसे युक्त प्रकाश दे ॥ ( १४ )

३८ हे ( वाजिनीवति उषः ) अन्नवाली उषा देवि ! ( अद्य अरुणान् अश्वान् युक्ष्व हि ) आज तू लाल रंगवाले घोडे अपने रथको जोत । ( अथ ) और ( नः ) हमारे लिये ( विश्वा सौभगानि ) सब प्रकारके भाग्ययुक्त ऐश्वर्य ( आ वह ) ले आ ॥ ( १५ )

---

# राहूगण पुत्र गौतम ऋषिका
# उषा वर्णन

गोतम ऋषिका उषा वर्णन अब देखिये, ये देखते हैं कि—

## ध्वजको ऊंचा करना

**२४ एता उषसः केतुं अक्रत** ( १।९२।१ )- ये उषाएं प्रकाश कर रही हैं। जैसा ध्वज ( केतु ) ऊपर फहराते हैं उस तरह उषाके किरणरूपी ध्वज आकाशमें फैल रहे हैं।

**रजसः पूर्वे अर्धे भानुं अञ्जते—** आकाशके पूर्व दिशाके विभागमें प्रकाश हो रहा है। अन्य सब आकाशमें प्रकाश नहीं है, पूर्व दिशाही लाल रंगसे शोभायमान दीखने लगी है। लाल रंगके किरण ऊपर आ रहे हैं।

## वीरोंके तीक्ष्ण शस्त्र

**धृष्णव आयुधानि निष्कृण्वाना इव—** शूरवीर युद्धके समय अपने शस्त्रास्त्र तीक्ष्ण करते हैं, उस तरह यह उषा पूर्व दिशाको तेजस्विनी बना रही है। यहां उषा स्त्री है, वह शूरवीरोंकी तरह अपने शस्त्रोंको तेज कर रही है, यह उपमा बता रही है कि स्त्रियोंको भी शस्त्र तीक्ष्ण करना और उनसे शत्रुओंको दूर करना चाहिये। पुरुष समीप न रहे तो स्त्रियोंको अपनी सुरक्षा करनेके लिये, अपने ऊपर आक्रमण करनेवाले दुष्टोंको दूर करनेके लिये, तैयार रहना चाहिये। संरक्षण करनेके लिये पुरुष न रहे तो वह कार्य स्त्रिया करें और अपना संरक्षण उत्तम रीतिसे करें।

## गौ माता है।

**अरुषीः मातरः गावः प्रति यन्ति—** लाल रंगवाली गौमाताएं प्रतिदिन आती है। प्रतिदिन उषःकालमें गौवें बाहर चरनेकें लिये खुली छोडी जाती हैं। उस तरह उषःकालमें सूर्य-किरणें बाहर खुली छोडी जाती हैं। जो ऊपर आती और विश्वको प्रकाशित करती हैं। यहां '**गौ**' को माता कहा है। गौ मनुष्योंकी माता है। वह लाल रंगकी होगी तो उसके दूधमें जीवनसत्त्व अधिक रहता है। इसलिये लाल रंगवाली गौवें माताएं होती हैं। '**अरुषीः गावः मातरः**'- लाल रंग-वाली गौवें माताएं कहलाती हैं।

**२५ अरुणाः भानवः उदपप्तन्** ( १।९२।२ - लाल-रंगके किरण ऊपर आ रहे हैं। ऊपरका आकाश लालरंगसे सुशोभित हुआ दीख रहा है।

**अरुषीः सु-आ-युजः गाः अयुक्षत—** लाल रंगवाले

सुखसे जोते जानेवाले बैल रथको जोते गये हैं। यहां 'गा' का अर्थ 'गौवें' नहीं है, प्रत्युत 'बैल' है, घोडे ऐसा भी किया जा सकता। क्योंकि गौवें वाहनको जोती जाती नहीं थी और 'गो' पद गोवंशका वाचक प्रसिद्ध है।

**उषासः वयुनानि अक्रन्**— उषाएं कर्मोंको करने लगी हैं अर्थात् उषःकालमें उठकर लोग अपने कर्मोंको करने लगे हैं, चारों ओरके लोग अपने कार्यमें निमग्न हुए हैं।

**अरुषी रुशन्तं भानुं अशिश्रियुः**— लाल रंगवाली उषाओंने अधिक तेजस्वी प्रकाश धारण किया है। कन्या जब बडी होती है तब वह अधिक तेजस्वी दीखने लगती है। उषाका रंग पहिले साधारणसा था, वह अब विशेष तेजस्वी हुआ है। जैसी कन्या तरुण होनेपर विशेष शोभती है, वैसी उषा अब अधिक सुंदर दीखने लगी है, वह जो पहिले कन्या थी वह अब तरुणी हो गयी है।

## उत्तम गृहिणी

**२६ अपसः नारीः इव** ( १।९२।३ )—कर्म करनेमें कुशल स्त्रियोंके समान उषाएं कर्म करती हैं और कर्मोंको कराती भी हैं। उषा आते ही यज्ञ शुरु होते हैं, यह उनका कर्म करना या कराना है। तरुण स्त्री अपना कर्म कुशलतासे करे तथा दूसरोंसे भी अच्छी तरह कर्म करावे। स्त्रीमें यह योग्यता चाहिये कि वह आते ही सब लोग कर्ममें तत्पर हो जाय। कोई उनके सामने कर्म करनेमें कसूर न कर सके। गृहिणीकी यह योग्यता चाहिये। तब वह घरका संचालन कर सकेगी।

**समानेन योजनेन आपरावतः विष्टिभिः अर्चन्ति**- एकही आयोजनसे दूरसे भी आकर कर्मोंसे सबको सुपूजित करते हैं। '**समान योजन**' का आशय एक ही आयोजन, एक ही नियोजन, एक संकल्पित कर्म, पहिलेसे निश्चित किया हुआ एक बडा कार्य कि जिसमें अनेकानेक कार्यकर्ता लगते हैं। ऐसे बडे बडे नियोजन यह तरुणी उषा करती है और उसमें अनेक कार्यकर्ताओंको लगा देती है और उनको ( विष्टिभिः अर्चन्ती ) धनोंसे पूजित करती हैं। कर्म करनेके बाद उनको उचित वेतन कर्मफल अथवा आजीविका देकर सुप्रसन्न करती है। '**विष्टि**' का अर्थ 'वेतन, मज्दूरी, कर्मफल, धंदा, कामधंदा' है। वेतनोंसे कार्यकर्ताओंको पूजित करना चाहिये। उषा अर्थात् तरुण स्त्री यह करती है। वैदिक समयकी तरुणी एक बडे कार्यमें अनेक कार्यकर्ताओंको नियुक्त करके उनको भरपूर वेतन देती थी। इतनी योग्यता आर्य तरुणीकी होनी चाहिये।

**सुकृते सुदानवे विश्वा इषः वहन्तीः**— उत्तम कर्म करनेवालेको तथा उत्तम दानी कर्मकर्ताको भरपूर अन्न देती है। वेतन देनेमें कभी कृपणता नहीं करती। '**सुकृते**' जो अपना कर्म उत्तम रीतिसे करता है, उसीको भरपूर वेतन देती है। पर यदि कोई कर्म करनेमें कसूर करेगा, तो उसको उचित जितना देना चाहिये उतना वेतन तो देती ही है पर उसका सत्कार वह नहीं करती।

इस मंत्रमें उषाकी कार्यतत्परता कितनी बडी हो गयी है देखिये। तरुणी स्त्रीको ऐसे कार्य करने चाहिये और अपने घरके व्यवसायोंको लाभकारी बना देना चाहिये। जहां ऐसी स्त्रियां होंगी वहां घरमें पर्याप्त धन आता रहा तो उसमें आश्चर्य ही क्या है?

## स्त्री अपना सौंदर्य बढावे

**२७ नृतूः इव पेशांसि अधिवपते**— यह उषा स्त्री नाचनेवाली स्त्रीके समान अपने वस्त्रों और अलंकारोंको वारंवार बदलती रहती है। अपने वेष बदलती है और अधिकाधिक सुंदर दीखती है। जैसी नर्तकी अपने वेष बदलकर अधिक सुंदर होती है, इसी तरह यह उषा अपने रंग बदलकर अधिक तेजस्विनी दीखती है। तरुणी अपने अलंकार, आभूषण और वस्त्र बदले और अधिक सुंदर बनकर लोगोंके सामने आजाय। '**सुवासिनी**' उत्तम स्त्रीको कहते हैं। मलिन वस्त्र तो घरमें कोई मरा तो ही पहने जाते हैं। अन्यथा पतिवाली स्त्रीको जहांतक हो सके वहांतक अपनी सुंदरता बढानी चाहिये।

यहां '**नृतूः**' नर्तकीका उदाहरण दिया है। नृत्य करनेका धंदा करनेवाली स्त्री नृतू कहलाती है। अधिकाधिक सुंदर बनना यह उनका धंदा ही होता है। यद्यपि यह उपमा हीन है, तथापि अधिक-सौंदर्य प्रसाधन करनेका भाव बतानेके लिये यही उपमा अच्छी है। अतः इसमें हीन आचरणका भाव पाठक न देखें। जिस कार्यके लिये उपमा दी जाती है, उतना ही कार्य उस उपमामें देखना चाहिये। यहां सौंदर्य बढानेका उपदेश किया है उतना ही भाव यहां देखना होगा है।

**उस्राः इव बर्जहं वक्षः अप ऊर्णुते**— गौओंके समान अपना पुष्ट वक्षःस्थल खुला करके स्त्री बताती है।

पूर्वोक्त रीतिसे वारंवार वस्त्रालंकार बदल कर स्त्री अपना सौंदर्य बढावे और अपनी हृष्टपुष्ट छाती बतावे। '**वक्षः अप ऊर्णुते**— छातीको खोल कर बताती है। तरुण स्त्री ऐसे हाव-भाव करती है कि जिससे उनकी पुष्ट छाती सहजहीसे लोगोंको दीखे। ' उस्राः इव ' गाय जैसी अपने स्तन दिखाती है वैसी उषा दिखाती है, और वैसी तरुणी भी दिखाती है। वास्तवमें यहां थोडीसी अत्युक्ति की है। तरुण स्त्रीको अपने अंग अच्छी तरह ढंककर रखना उचित है। पर जो तरुणी स्त्री कन्याकी अवस्थासे उपर आगयी है और परिपूर्ण प्रौढ तरुणी बनी नहीं, वह सहजहीसे निष्कपटभावसे अपनी छातीको विशेष विचार न करती हुई खुली भी करती है अथवा प्रकट भी करती है, इसका ख्याल ही उसको नहीं होता। उषा इस तरह कर रही है। ऐसा कवि वर्णन कर रहा है। नूतन यौवन धारण करने-वाली तरुणीका यह वर्णन है।

**विश्वस्मै भुवनाय ज्योतिः कृण्वती**— सब भुवनों-को प्रकाश देती है। इसलिये वह अपने शरीरावयव खुले कर देती है ऐसा काव्यमय वर्णन हुआ है। विना शरीरावयव खुले किये उषाका प्रकाश चारों ओर कैसा जा सकता है? उषा अपने अवयव खुले करती है, अतः चमकती है और लोगोंका चित्त आकर्षित करती है। ऐसा ही बर्ताव तरुणी नर्तकी करती है।

**गावः व्रजं न, उषाः तमः वि आवः**—गौवें गोशाला खुलते ही जिस तरह बाहर आती हैं उस तरह उषा अपने प्रकाशको बाहर करती है जिससे अन्धकार दूर हो जाता है और प्रकाश होता है।

२८ **अस्याः रुशत् अर्चिः प्रत्यदर्शि** ( १।९२।५ )- इस उषाकी तेजस्वी ज्योति कैसी सुंदर दीख रही है देखो तो सही !

**वितिष्ठते, अभ्वं कृष्णं बाधते**— यह प्रकाश चारों ओर फैलता है और काले विशाल अन्धकारको दूर करता है।

**विदथेषु स्वरुं न पेशः अञ्जन्, चित्रं भानुं अश्रेत्**— यज्ञोंमें यूपके स्तंभको जैसे घृतादि लगाकर सजाते हैं, उस तरह विशेष प्रकाशका आश्रय करनेसे वह विशेष सुन्दर दीखती है।

यह तरुणी अपने घरमें प्रकाश करती है, अन्धकार दूर करती है, अपना रूप सुन्दर करके दिखा देती है, और सबको ऐश्वर्यकी प्राप्तिका मार्ग दिखा देती है।

२९ **अस्य तमसः पारं अतारिष्म** ( १।९२।६ )— इस अन्धकारके पार हम पहुच गये है, हम प्रकाशमें आ गये हैं।

**उच्छन्ती उषा वयुना कृणोति**— प्रकाशनेवाली उषा कर्मोंको करनेकी प्रेरणा देती है। इस तरह तरुण स्त्री घरके पुत्र-पौत्रोंको जलदी उठाकर उनको कर्मोंके करनेके लिये प्रेरित करे।

**श्रिये छन्दः न, विभाती सुप्रतीका सौमनसाय अजीगः**— जिस तरह धनीसे ऐश्वर्य प्राप्त करनेके लिये उसके छन्दके अनुसार, उसके मनके अनुसार, दूसरे लोक कार्य करते हैं, उस तरह तेजस्वी सुन्दर तरुण स्त्री अपने पतिके मनकी सुप्रसन्नताके लिये हसती हुई, घरके मनुष्योंको जगाती है। अथवा अन्धेरेको दूर करती है। यहां पतिके घरमें स्त्री कैसी रहे इसका उत्तम वर्णन है। पतिको प्रसन्न करनेके लिये पत्नी सदा हंसती रहे, प्रसन्नचित्त होकर रहे। घरके लोगोंको जगा देकर उनको भी आनंद प्रसन्न रखना घरकी गृहिणीका कार्य है।

३० **भास्वती सूनृतानां नेत्री गोतमेभिः स्तवे**— तेजस्विनी और सत्कर्मोंकी प्रेरिका उषाकी गोतम ऋषियोंके द्वारा स्तुति की जा रही है।

**हे उषः! प्रजावत नृवत अश्वबुध्यान् गो-अग्रान् वाजान् उपमासि**— हे उषा! वीर पुत्र-पौत्रोंसे और घोडों तथा गौओंसे युक्त अन्नों और बलोंको तू हमें देती है।

## धन कैसा हो

३१ **हे उषः! यशसं सुवीरं दासप्रवर्गं अश्वबुध्यं रयिं अश्याम्** ( १।९२।८ )- हे उषा! हमें यशस्वी, पुत्र-पौत्रोंवाला, सेवकवर्गसे युक्त, घोडोंसे युक्त धन प्राप्त हो। यहां इच्छा यह की गई है कि हमें यश मिले, हमें वीर पुत्र उत्पन्न हो, हमारे घरमें सेवक पर्याप्त संख्यामें रहें, तथा हमारे घरमें घोडे, गौवें, रथ आदि हों। ऐसा धन हमे प्राप्त हो। हमारा घर ऐसा ऐश्वर्य युक्त हो। हीनता, दीनता, दरिद्रता हमारे पास न हो।

**सुदंससा श्रवसा वाजप्रसूता बृहन्तं विभासि**- उत्तम कर्म जिससे किये जा सकते हैं, जिससे यश मिलता है, जिससे पर्याप्त अन्न मिल सकता है, ऐसा विशाल धन हमारे लिये प्रकाशित कर। अर्थात् ऐसा धन हमें मिले।

**३२ देवी विश्वानि भुवना अभिचक्ष्य प्रतीची चक्षु: उर्विया विभाति ( १।९२।९ )**— यह प्रकाशमान उषा सब भुवनोंको देखती हुई पश्चिमकी ओर अपना आंख करके विशेष रीतिसे प्रकाशती है।

**विश्वं जीव चरसे बोधयन्ती**— सब जीवोंको अपने अपने कार्य करनेके लिये यह उषा जगाती है। इस तरह घरकी गृहिणी अपने बालबच्चोंको जगाती और कार्योंमें प्रेरित करती है।

**विश्वस्य मनायोः वाचं अविदत्**— सब मानवोंकी प्रशंसा प्राप्त करती है। अर्थात् सब मनुष्य उषाकी उक्त कारण स्तुति करते हैं।

**३३ मर्तस्य आयुः जयन्ती ( १।९२।१० )**— मनुष्योंकी, आयु यह उषा आती है और कम करती है। एक बार उषा आगयी तो मनुष्योंकी आयु कम हो जाती है।

**कृत्नु श्वघ्नी इव विजः आमिमाना**— कुत्तेको काटनेवाली हिंसक वाघीनके समान, तथा पक्षियोंको काटनेवालीके समान, यह उषा प्राणियोंकी आयु कम कर देती है।

**३४ दिवः अन्तान् वि ऊर्णवती अबोधि**— आकाशके अन्तभागतक प्रकाशको फैलानेवाली उषा अब जाग उठी है।

**स्वसारं सनुत अपयुयोति**— अपनी रात्री रूप वहिन को शीघ्र ही दूर करती है।

**मानुष्या युगानि प्रमिनती**- मनुष्योंकी आयुके दिन और रात्रीकी जोडीका नाश करती है, दिन आकर रात्री जाती है, पश्चात् दिन आता है। इस तरह जो आता है वह विनष्ट हो जाता है।

## जारका हानिकारक वैभव

**योषा जारस्य चक्षसा विभाति**— यह स्त्री अपने जारके वैभवसे प्रकाशती है। किसी स्त्रीको पति जितने आभूषण डालता है, उससे अधिक जार डालता है। इसलिये कोई स्त्री जारके वैभवसे अधिक शोभती है। पर यह वैभव लेने योग्य नहीं, क्योंकि वह जार ही इस स्त्रीका नाश करता है। सूर्य उषाका जारकरके यहां वर्णन किया है। यह अलंकार है। यहां सूर्यमें जार पनकी संभावना नहीं। पर सूर्यके वैभवसे यह उषा अधिक प्रकाशती है। इस जारसे वैभव प्राप्त करनेके मिषसे यह उषा सूर्यके साथ अधिक रमने लगती है और ऐसा करते करते अन्तमें वही जार आकर इसका नाश करता है। अत जारसे संबंध रखना किसी स्त्रीके लिये योग्य नहीं है। उषाके वर्णनमें यह उपदेश स्त्रीके लिये यहां दिया है।

३५ यह उषा **देव्यानि व्रतानि अमिनती**— दिव्य कर्मोका कदापि नाश नहीं करती। सब दिव्यकर्मोंको यथासांग पूर्ण करती है।

**सूर्यस्य रश्मिभिः दृशाना चेति**— सूर्यके किरणोंसे यह उषा दिखाई देती है ऐसा ज्ञात होता है। सूर्यकिरणोंसे उषाकी उत्पत्ति होती है। सूर्य किरणोंसे उषाकी शोभा बढती है।

**३६ हे वाजिनी वति उष ! येन तोकं तनयं च धामहे तत् चित्र अस्मभ्यं आभर** (१।९२।१३)-हे वैभवयुक्त उषा ! जिससे पुत्रपौत्रोंका तारण हम कर सकेंगे वैसा उत्तम वैभव हमें भरपूर भर दे।

३७ उषा ( गोमती अश्वावती ) गौओ और घोडोंसे युक्त है, ( विभावरि सूनृतावती ) वैभववाली और उत्तम भाषणवाली है, ( अस्मे रेवत् व्युच्छ ) हमारा हित करनेके लिये धनके साथ प्रकाशित हो।

३८ हे उषा ! आज लाल रंगोंके घोडोंको तुम अपने रथको जोत और हमें सब प्रकारके उत्तम भाग्य दे दो।

**॥ यहां गोतम ऋषिका उषाका वर्णन समाप्त हुआ ॥**

# कुत्स ऋषिका उषा वर्णन

(ऋ. १।११३।१-२०)

( कुत्स आंगिरसः। उषाः। त्रिष्टुप् )

३९ इदं श्रेष्ठं ज्योतिषां ज्योतिरागाच्चित्रः प्रकेतो अजनिष्ट विभ्वा ।
यथा प्रसूता सवितुः सवायँ एवा रात्र्युषसे योनिमारैक् ॥ १ ॥
४० रुशद्वत्सा रुशती श्वेत्यागादारैगु कृष्णा सदनान्यस्याः ।
समानबन्धू अमृते अनूची द्यावा वर्णं चरत आमिनाने ॥ २ ॥
४१ समानो अध्वा स्वस्रोरनन्तस्तमन्यान्या चरतो देवशिष्टे ।
न मेथेते न तस्थतुः सुमेके नक्तोषासा समनसा विरूपे ॥ ३ ॥
४२ भास्वती नेत्री सूनृतानामचेति चित्रा वि दुरो न आवः ।
प्राप्र्या जगद्व्यु नो रायो अख्यदुषा अजीगर्भुवनानि विश्वा ॥ ४ ॥

---

३९ ( इदं ज्योतिषां श्रेष्ठ ज्योति. ) यह तेजस्वी पदार्थोंके तेजसे भी अधिक श्रेष्ठ तेज-उषाका तेज-( आगात् ) आरहा है, पूर्व दिशामें आरहा है, ( चित्रः प्रकेतः विभ्वा अजनिष्ट ) यह विलक्षण रमणीय प्रकाश फैलता हुआ प्रकट हो रहा है। ( यथा रात्रिः सवितुः सवाय प्रसूता ) जिस तरह रात्री सूर्यकी उत्पत्तिके लिये उत्पन्न हुई, ( एवा ) वैसी ही यह रात्री ( उषसे योनिं अरैक् ) उषाके जन्म लिये स्थान खुला कर रही है ॥ ( १ )

४० ( रुशद्वत्सा रुशती श्वेत्या ) तेजस्वी बालकवाली स्वयं तेजस्विनी गौरवर्ण उषा ( आ गात ) आगई है। ( अस्याः ) इस उषाके लिये ( कृष्णा ) काली रात्रीने ( सदनानि अरैक् उ ) रहनेके स्थान खुले करके रखे हैं। ( समान-बन्धू अमृते ) जिनका बन्धु एक ही है ऐसी ये रात्री और उषा अमर हैं और ( अनूची ) क्रमसे आती हैं। ये दोनों ( द्यावा ) प्रकाशमान ( वर्णं आमिमाने ) और विश्वके रंगको बदलती हुई ( चरत. ) भ्रमण करती हैं ॥ ( २ )

४१ ( स्वस्रोः अध्वा समानः ) रात्री और उषा इन दोनों बहिनोंका मार्ग एक ही है और वह ( अनन्तः ) अन्त-रहित है। ( देवशिष्टे ) ईश्वरकी आज्ञानुसार चलनेवाली ये दो बहिनें ( अन्या अन्या तं चरतः ) क्रमसे एकके पीछे दूसरी इस मार्गसे चलती हैं। ये दोनों ( नक्तोषासा सुमेके ) रात्री और उषा उत्तम स्नेह धारण करनेवाली ( विरूपे समनसा ) परस्पर विरुद्ध रंग रूपवाली होनेपर भी एक मतसे सब कार्य करनेवाली ( न तस्थतुः ) ये कभी एक स्थान पर ठहरती नहीं, अथवा ( न मेथेते ) परस्परका कार्य बिगाडती भी नहीं ॥ ( ३ )

४२ ( भास्वती ) प्रकाशमयी ( सूनृतानां नेत्री ) सत्कर्मोंको संचालिका यह उषा ( अचेति ) दीखने लगी है। ( चित्रा नः दुरः वि आवः ) यह विलक्षण सुंदर उषा हमारे द्वारोंको खोलती है। ( जगत् प्रार्प्य ) जगत्को प्रकाशित करके यह उषा ( रायः नः अख्यत् उ ) धनोंको हमारे लिये घोषित करती है, देती है। और यह ( उषा. विश्वा भुव-नानि अजीगः ) उषा सब भुवनोंको प्रकाशमें निगल देती है, प्रकाशित करती है ॥ ( ४ )

४३ जिह्मश्ये ३ चरितवे मघोन्याभोगाय इष्टये राय उ त्वम् ।
दभ्रं पश्यद्भ्य उर्विया विचक्ष उषा अजीगर्भुवनानि विश्वा ॥ ५ ॥
४४ क्षत्राय त्वं श्रवसे त्वं महीया इष्टये त्वमर्थमिव त्वमित्यै ।
विसदृशा जीविताभिप्रचक्ष उषा अजीगर्भुवनानि विश्वा ॥ ६ ॥
४५ एषा दिवो दुहिता प्रत्यदर्शि व्युच्छन्ती युवतिः शुक्रवासाः ।
विश्वस्येशाना पार्थिवस्य वस्व उषो अद्येह सुभगे व्युच्छ ॥ ७ ॥
४६ परायतीनामन्वेति पाथ आयतीनां प्रथमा शश्वतीनाम् ।
व्युच्छन्ती जीवमुदीरयन्त्युषा मृतं कं चन बोधयन्ती ॥ ८ ॥
४७ उषो यदग्निं समिधे चकर्थ वि यदावश्चक्षसा सूर्यस्य ।
यन्मानुषान् यक्ष्यमाणाँ अजीगस्तद्देवेषु चकृषे भद्रमप्नः ॥ ९ ॥
४८ कियात्या यत् समया भवाति या व्यूषुर्याश्च नूनं व्युच्छान् ।
अनु पूर्वाः कृपते वावशाना प्रदीध्याना जोषमन्याभिरेति ॥ १० ॥

---

४३ ( जिह्मश्ये चरितवे ) सोनेवालेको घुमानेके लिये ( आभोगाय ) भोगोंको प्राप्त करनेके लिये ( इष्टये राये ) यज्ञ करनेके लिये तथा धन प्राप्त करनेके लिये ( त्वं उ मघोनी ) तू धनवाली उषा प्रकाशती है ।( दभ्रं पश्यद्भ्यः विचक्षे ) जिनको कम दीखता है उनको अधिक दिखानेके लिये ( उर्विया उषाः ) विशाल उषा ( विश्वा भुवना अजीगः ) सब भुवनोंको जगाती है ॥ ( ५ )

४४ हे उषा ! ( क्षत्राय त्व ) क्षत्रियके युद्धादि कर्मके लिये ( श्रवसे त्वं ) अन्नादिके अथवा कीर्तिके लिये, ( महीय इष्टये त्वं ) बडे यज्ञके लिये ( अर्थं इव इत्यै त्वं ) अपेक्षित अर्थके पास पहुचनेके लिये ( विसदृशा जीविता अभिप्रचक्षे ) विविध प्रकारके जीवन साधन देखनेके लिये ( उषा विश्वा भुवनानि अजीगः ) तू उषा सब भुवनोंको जगाती है ॥ ( ६ )

४५ ( एषा दिवो दुहिता ) यह द्युलोककी पुत्री ( व्युच्छन्ती ) अन्धकारको दूर करती है ऐसा ( प्रत्यदर्शि ) दीख पडता है । यह ( युवतिः ) तरुणी ( शुक्रवासाः ) शुभ्र वस्त्र पहननेवाली ( विश्वस्य पार्थिवस्य वस्व ईशाना ) सब पृथ्वी–परके धनकी स्वामिनी है । हे (सुभगे उषः) उत्तम भाग्यवाली उषा ! (अद्य इह व्युच्छ) आज यहां प्रकाश कर ॥ ( ७ )

४६ यह उषा ( परायतीनां पाथः अनु एति ) भूतकालमें गई हुई उषाओंके मार्गसे आती है तथा ( आयतीनां शश्वतीनां प्रथमा ) आनेवाली अनेक उषाओंमें यह प्रथमा उषा है । यह ( उषाः ) उषा ( व्युच्छन्ती ) प्रकाशती और (जीवं उदीरयन्ती) जीवितोंको उठाती है और (कं चन मृतं बोधयन्ती) किसी मृत जैसे सोनेवालेको भी जगाती है॥ ( ८ )

४७ हे ( उष ) उषा ! तूने ( अग्निं समिधे यत् चकर्थ ) अग्निको प्रज्वलित करनेके लिये जो किया और ( सूर्यस्य चक्षसा यत् वि आव ) सूर्यके प्रकाशसे जो तूने प्रकाश किया, और ( यक्ष्यमाणान् मानुषान् यत् अजीगः ) यज्ञ करनेवाले मनुष्योंको जगाया, ( तत् अप्नः भद्रं ) वह कल्याणकारक कर्म और ( देवेषु चकृषे ) देवोंके लिये प्रिय कर्म तूने किया है ॥ ( ९ )

४८ ( कियति समया यत् आ भवाति ) कितने समय तक यह उषा यहां होती है ? ( याः व्यूषुः ) जो प्रकाशित हो चुकी थी, ( याः च नूनं व्युच्छान् ) और जो आनेवाली उषाएं हैं वे भी भला कितनी देर रहेगी ? ( पूर्वाः वावशाना अनुकृपते ) पूर्व कालमें गयी उषाओंका स्मरण करानेवाली वर्तमान उषा प्रकाशनेमें समर्थ होती है, यह ( प्रदीध्याना अन्याभिः ) प्रकाशमान होनेवाली उषा अन्य उषाओंके ( जोषं एति ) साथ जाती है ॥ ( १० )

४९ ईयुष्टे ये पूर्वतरामपश्यन् व्युच्छन्तीमुषसं मर्त्यासः ।
अस्माभिरू नु प्रतिचक्ष्याभूदो ते यन्ति ये अपरीषु पश्यान् ॥ ११ ॥
५० यावयद्द्वेषा ऋतपा ऋतेजाः सुम्नावरी सूनृता ईरयन्ती ।
सुमङ्गलीर्बिभ्रती देववीतिमिहाद्योषः श्रेष्ठतमा व्युच्छ ॥ १२ ॥
५१ शश्वत् पुरोषा व्युवास देव्यथो अद्येदं व्यावो मघोनी ।
अथो व्युच्छादुत्तराँ अनु द्यूनजरामृता चरति स्वधाभिः ॥ १३ ॥
५२ व्य१ञ्जिभिर्दिव आतास्वद्यौदप कृष्णां निर्णिजं देव्यावः ।
प्रबोधयन्त्यरुणेभिरश्वैरोषा याति सयुजा रथेन ॥ १४ ॥
५३ आवहन्ती पोष्या वार्याणि चित्रं केतुं कृणुते चेकिताना ।
ईयुषीणामुपमा शश्वतीनां विभातीनां प्रथमोषा व्यश्वैत् ॥ १५ ॥
५४ उदीर्ध्वं जीवो असुर्न आगादप प्रागात् तम आ ज्योतिरेति ।
आरैक्पन्थां यातवे सूर्यायागन्म यत्र प्रतिरन्त आयुः ॥ १६ ॥

---

४९ ( ये मर्तासः ) जो मानव ( व्युच्छन्तीं पूर्वतरां उषसं ) प्रकाशनेवाली पूर्व समयकी उषाको ( अपश्यन् ) देख चुके ( ते ईयुः ) वे चले गये । ( अस्माभि. नु प्रतिचक्ष्या अभूत् ) हमारे द्वारा यह उषा देखी जा रही है, तथा ( ये अपरीषु पश्यान् ) जो आनेवाली उषाको देखेंगे, ( ते यन्ति ) वे सब जानेवाले हैं ॥ ( ११ )

५० ( यावयत्-द्वेषाः ) शत्रुओंको दूर करनेवाली, ( ऋतपाः ) सत्यका पालन करनेवाली, ( ऋते-जा. ) सत्यके लिये उत्पन्न हुई, ( सुम्नावरी ) सुख देनेवाली, ( सूनृता ईरयन्ती ) वाणीको प्रेरित करनेवाली ( सुमंगली ) उत्तम मंगल करनेवाली ( देववीतिं बिभ्रती ) देवोंके लिये यज्ञका धारण करनेवाली ( श्रेष्ठतमा ) अत्यंत श्रेष्ठ ऐसी तू, हे ( उषः ) उषा ! ( इह अद्य व्युच्छ ) यहां आज प्रकाशित हो ॥ ( १२ )

५१ ( देवी उषा. पुरा शश्वत् वि उवास ) दिव्य उषा पूर्व समयसे सदा प्रकाशती आयी है । ( अथो अद्य मघोनी इदं व्यावः ) और आज धनवाली यह उषा इस जगत्को प्रकाशित कर रही है । ( अथो उत्तरान् द्यून् अनु व्युच्छात् ) और भविष्यमें भी दिनोंमें यह ऐसी ही प्रकाशती रहेगी । ऐसी यह ( अजरा अमृता स्वधाभिः चरति ) जरारहित और मरणरहित उषा अपनी धारक शक्तियोंके साथ चलती रहती है ॥ ( १३ )

५२ ( दिवः आतासु ) द्युलोककी सब दिशाओंमें ( अंजिभिः वि अद्यौत् ) प्रकाश किरणोंसे यह प्रकाशती है । ( देवी कृष्णां निर्णिज अप आवः ) यह दिव्य उषा काले अन्धकारको दूर करती है । ( अरुणेभिः अश्वैः सयुजा रथेन ) उत्तम रीतिसे लाल रंगवाले घोडोंके साथ जोते हुए रथसे ( आ याति ) यह आती है और ( एषा प्रबोधयन्ती ) यह उषा सबको जगाती है ॥ ( १४ )

५३ ( पोष्या वार्याणि आवहन्ती ) पोषणके लिये आवश्यक धनोंको लानेवाली ( चेकिताना ) सबको प्रकाश दिखानेवाली यह उषा ( चित्रं केतुं कृणुते ) विलक्षण सुंदर प्रकाश फैलाती है । ( ईयुषीणां शश्वतीनां उपमा ) गत उषाओंमें अन्तिम तथा ( विभातीनां प्रथमा ) आनेवाली उषाओंमें पहिली ( उषाः ) यह उषा ( वि अश्वेत् ) विशेष चमक रही है ॥ ( १५ )

५४ हे मानवो ! ( उदीर्ध्वं ) उठो, ( नः असु जीवः आगात् ) हमारा यह प्राण रूप प्रकाश आ गया है । ( तमः अप प्रागात् ) अन्धकार दूर हुआ, ( ज्योतिः आ एति ) ज्योती आ रही है । ( सूर्याय यातवे पन्थां आरैक् ) सूर्यके गमनके लिये मार्ग खुला हो रहा है, ( यत्र आयुः प्रतिरन्त अगन्म ) जहां आयु बढती है वहां हम पहुंच जांय ॥ ( १६ )

५५ स्यूमना वाच उदियर्ति वह्निः स्तवानो रेभ उषसो विभातीः ।
अद्या तदुच्छ गृणते मघोन्यस्मे आयुर्नि दिदीहि प्रजावत् ॥ १७ ॥
५६ या गोमतीरुषसः सर्ववीरा व्युच्छन्ति दाशुषे मर्त्याय ।
वायोरिव सूनृतानामुदर्के ता अश्वदा अश्नवत् सोमसुत्वा ॥ १८ ॥
५७ माता देवानामदितेरनीकं यज्ञस्य केतुर्बृहती वि भाहि ।
प्रशस्तिकृद्ब्रह्मणे नो व्यु१च्छा नो जने जनय विश्ववारे ॥ १९ ॥
५८ यच्चित्रमप्न उषसो वहन्तीजानाय शशमानाय भद्रम् ।
तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ २० ॥

५५ ( वह्निः रेभः ) स्तोत्र पाठ करनेवाला कवि ( विभातीः उषसः स्तवानः ) प्रकाशनेवाली उषाओंकी स्तुति करता हुआ, ( स्यूमना वाचः उदियर्ति ) जिसमें मन रमता है ऐसी स्तोत्रोंकी वाणी बोलता है। हे ( मघोनि ) धनवाली उषा ! ( अद्य गृणते तत् उच्छ ) आज स्तोताके लिये वह प्रकाश दे और ( अस्मे प्रजावत् आयुः नि दिदीहि ) इसके लिये पुत्र पौत्रोंके साथ रहनेवाला आयु रूपी धन दे दो ॥ ( १७ )

५६ ( दाशुषे मर्त्याय ) दाता मनुष्यके लिये ( गोमतीः सर्ववीराः या उषसः ) गौवोंवाली और वीरोंसे युक्त ये उषायें ( व्युच्छन्ति ) प्रकाश रही हैं। ( वायोः इव सूनृतानां उदर्के ) वायुके समान शीघ्रगामी स्तुतिरूपी सत्यभाषणोंके प्रकाशित होनेपर ( अश्वदाः ताः ) घोड़ोंको देनेवाली वे उषायें ( सोमसुत्वा अश्नवत् ) सोमयाग करनेवालोंको प्राप्त होती हैं ॥ ( १८ )

५७ हे उषा ! तू ( देवानां माता ) देवोंकी माता है, तू ( अदितेः अनीकं ) अदितिका मुख है। तू [ यज्ञस्य केतुः ) यज्ञका ध्वज होकर ( बृहती विभाहि ) विशेष रीतिसे प्रकाशित हो। ( नः ब्रह्मणे प्रशस्तिकृत् व्युच्छ ) हमारे ज्ञानकी प्रशंसा करती हुई प्रकाशित हो। हे ( विश्ववारे ) सबके द्वारा आदरणीय उषा ! ( नः जने जनय ) हमें अपने लोकोंमें सन्मानके स्थानमें पहुंचा दो ॥ ( १९ )

५८ ( यत् चित्रं अप्नः उषसः वहन्ति जो विलक्षण धन उषाएं धारण करती हैं। वह धन ( ईजानाय शशमानाय भद्रं ) यज्ञ करनेवाले याजकके लिये कल्याण करनेवाला होता है। यह प्रार्थना मित्र, वरुण, अदिति, सिन्धु, पृथिवी और द्यौ ये देव ( नः म महन्तां ) हमारे लिये सफल करें ॥ ( २० )

# आंगिरस गोत्री कुत्स ऋषिका
# उषा वर्णन

कुत्स ऋषि उषाका वर्णन करनेके प्रसंगमें कहते हैं—

**३९ इदं ज्योतिषां श्रेष्ठं ज्योतिः आगात्** (१।११३।१) – हे लोगो ! यह ज्योतियोंमें श्रेष्ठ ज्योतिरूप तेज उषाके रूपमें आकाशमें आ रहा है, देखो यह कितना रमणीय है। यह '**चित्रः प्रकेतः विभ्वा अजनिष्ट**'—यह तेज विलक्षण है, ज्ञान देनेवाला है, और चारोंओर फैलनेवाला है। ऐसा यह विलक्षण तेज आकाशमें फैल रहा है।

**रात्रि सवितुः सवाय प्रसूता**— यह रात्री सूर्यकी उत्पत्ति के लिये प्रसूत हो गयी है। रात्री प्रसूत होकर उसके उदरसे सूर्य उत्पन्न होता है। अर्थात् यह काली रात्री तेजस्वी सूर्यकी माता है। '**एवा उषसे योनिं आरैक्**' - यह रात्री उषाके लिये उत्पत्तिस्थान खुला करके दे रही है। अर्थात् रात्रीसे उषा उत्पन्न होती है और उसी रात्रीसे सूर्य भी उत्पन्न होता है। ऐसी यह तेजस्वी उषा अपने साथ दिव्य ज्योति

लेकर आरही है। लोगो! इस उषाका यह दिव्य तेज देखो, कैसा यह तेज आनन्ददायक है, सबको यह तेज जगा रहा है, सब विश्वको प्रकाशित कर रहा है। देखो! देखो यह अद्भुत तेज आ रहा है।

## बालककी माता

**४० रुशद्वत्सा रुशती श्वेत्या आगात्** ( १।११३।२ )- तेजस्वी बालक जिसके गोदमें है ऐसी तेजस्विनी गौरवर्णवाली माता उषा आगयी है। इसका तेज देखो, कैसा चमक रहा है।

इस वर्णनकी उषा बालकवाली है। पहिले हमने कन्या रूपमें उषा देखी, उसके पश्चात् तरुणी उषा देखी, उसके पश्चात् पतिकी इच्छा करनेवाली और अपनी छातीको बतानेवाली उषा हमने देखी। अब इस मंत्रमें जो उषाका वर्णन है वह ( रुशद्-वत्सा ) जिसका बालक तेजस्वी, सुंदर, हृष्टपुष्ट, पूर्णांग, हास्य-मुख है, जिसके आखमें तेज चमक रहा है, ऐसे बालककी यह माता है। उषाके ये काव्यमय वर्णन कैसे मनोरम हैं यह देखने योग्य है।

**कृष्णा अस्याः सदनानि अरैक्**— कालेवर्णके रात्रीने इस उषाके लिये अनेक स्थान खुले किये हैं। अर्थात् जहां रात्रीका काला अन्धेरा छाया था, वहा अब उषाका प्रकाश पड रहा है। और अन्धेरा दूर हो रहा है।

**अमृते समानबन्धू अनूची द्यावा वर्णं आमिमाने चरतः** — अमर धर्मवाली दोनों रात्री और उषाका बन्धु एक ही है। इन दो बहिनोंका भाई एक ही है, ये क्रमसे एकके पीछे एक आते हैं, ये दोनों अपने वर्णको बदलती हैं और विश्वमें संचार कर रही हैं। रात्रीके पीछे उषा, उषाके पीछे उनका भाई दिन, और दिनके पीछे पुनः रात्री ऐसा, क्रम चल रहा है। यह क्रम बंद नहीं होता। यहां उषा और रात्री ये दो बहिनें हैं और इन दोनोंका भाई दिन है। ये सदा चल रही हैं, कहीं ठहरती नहीं और कभी विश्राम भी नहीं करती। ये अपना रंग बदलती हैं, उषा भी पांच दस निमेषोंमें अपनी लाल, पीला, श्वेत ऐसे रंग बदलती है और रात्री भी प्रथम, द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ प्रहरमें रंग बदलती है। इस तरह यह एकके पीछे एक आती हैं और दूसरी जाती है।

**४१ स्वस्रोः समानः अनन्तः अध्वा** ( १।११३।३ ) - रात्री और उषा इन दोनों बहिनोंका एकही समाप्त न होनेवाला मार्ग है। पृथ्वीके ऊपर गोल घूमनेके कारण कितना भी इन्होंने भ्रमण किया तो भी यह मार्ग गोल होनेसे समाप्त होनेवाला नहीं है। तथा ये रात्री और उषा एकके पीछे एक आती है, इस कारण ये पृथ्वीके पीछे घूमती ही रहेंगी और इनका परिभ्रमण समाप्त नहीं होगा। पृथ्वी गोल है, रात्री और उषा इस गोल पृथ्वीपरसे एकके पीछे एक ऐसी घूमती हैं इसलिये इनका मार्ग समाप्त होनेवाला नहीं। यह भूगोल और खगोल विद्याका ज्ञान यहा प्रकट हो रहा है। गोल वर्तुल जो मार्ग होगा, वह कभी समाप्त नहीं होगा।

**देवशिष्टे अन्या अन्या तं चरत** — ईश्वरके नियमानुसार एकके पीछे एक इस तरह रात्री और उषा एकके पीछे एक इस क्रमसे आती रहती हैं। यहा समझना चाहिये कि रात्री, उषा इन दो बहिनोंके पश्चात् दिन यह उनका भाई आता है और इस भाईके पीछे फिर रात्री और उषा आती है। केवल उत्तरीय ध्रुवके पास रात्री और उषा ये एकके पीछे एक इस तरह ३० दिन तक आते हैं और पश्चात् सूर्य उगता है जो पृथ्वीपर पाच मास प्रकाश गिराता है।

## स्त्रियोंके लिये उपदेश

**नक्तोषासा विरूपे सुमेके समनसा न तस्थतुः, न मेथेते** — रात्री और उषा ये दो बहिने परस्पर विरुद्ध रंगरूपवाली होनेपर भी परस्पर स्नेहभाव धारण करनेवाली जैसी रहती हैं और एक मनसे कार्य करती हैं। ये किसी स्थानपर बैठती नहीं और परस्परके कार्यका बिगाड भी नहीं करती।

रात्री बिचारी काले रंगकी स्त्री है, उषा सुंदर रंगरूपवाली गौर वर्णकी नर्तकी जैसी अतिसुंदर स्त्री है। स्त्रियोंमें अपने सौंदर्यके कारण ईर्ष्या द्वेष रहता है, वैसा ईर्ष्याद्वेष इनमें नहीं होता। ये परस्पर मिल जुलकर रहती है। उषा अपने सौंदर्य-की घमंड नहीं करती और रात्री अपने काले रंगके कारण अपने आपको हीनदीन नहीं मानती और नाही सुन्दरी उषाका द्वेष करती है। ये दोनों स्त्रिया परस्पर प्रेम करती हैं और एक विचारसे कार्य करती है किसी स्थानपर विश्राम नहीं करती, आलस्य नहीं करती, बाते करती हुई कार्यमें विलंब नहीं करती और परस्पर के कार्यमें क्षती नहीं करती। इस तरह स्त्रियां परस्पर प्रेमसे बर्ताव करें।

इस मंत्रमें स्त्रियोंके लिये बडा उपदेश है। काले रंगवाली अथवा कुरूप स्त्रिया गौरवर्णवाली सुंदर स्त्रियोंका द्वेष न करें, इस

कारण स्पर्धा ईर्ष्या द्वेष मनमें धारण न करें। परंतु परस्पर मित्रतासे और स्नेहभावसे बर्ते। सब मिलकर घरका अथवा कार्यालयका कार्य एक विचारसे करें। किसी समय आलस्यसे अपना कार्य न छोड कर बैठे, कार्यमें किसी कारण विघ्न न करें। परंतु प्रेमके पारस्परिक वर्तावसे अपने घरका वंशका जातीका और राष्ट्रका गौरव बढा देवे। इस मंत्रका एक एक पद स्त्रीका आदर्श जीवन कैसा होना चाहिये इसका उपदेश कर रहा है। उसकी ओर पाठक ध्यान दें।

स्त्रियोंमें मत्सर रहता है, जो स्त्री सुन्दर होती है, जो पुत्रवती होती है, जिसपर पति अधिक प्रेम करता है उसके साथ ईर्ष्या स्पर्धा तथा मत्सर करना, यह दोष स्त्रियोंमें होता है। वैसा स्वभाव न हो यह उपदेश यहां किया है। उषा स्त्री अत्यंत सुंदरी है, मनोहारिणी है, तेजस्विनी है, सुपुत्रवाली है, पुत्र भी अत्यंत सुंदर और तेजस्वी है। रात्री काली है। विरूप है, भयानक है, तथापि इनमें परस्पर द्वेष नहीं है, परस्पर प्रेम है, एक विचारसे इनका पारस्परिक कार्य चलता है। अतः यह स्त्रियोंका आदर्श इस मंत्रने यहां बताया है।

**४२ भास्वती सूनृतानां नेत्री चित्रा अचेति दुरः वि आवः** ( १।११३।४ ) — तेजस्विनी, सन्मार्गोंकी शुभ-भाषणोंकी प्रेरणा करनेवाली यह सुंदर स्त्री उषा जाग उठी है, यह अपने घरके द्वार खोल रही है।

**जगत् प्रार्प्य रायः नः अख्यत्** — यह उषा जगत्को प्रकाश देती है और हमें धन देती है।

**उषा विश्वा भुवनानि अजीगः** — यह उषा आकर सब भुवनोंको, सब प्राणियोंको जगाती है। इसी तरह स्त्री घरमें सबसे प्रथम उठे और घरके लोगोंको जगावे और उनको अपने अपने कर्मोंमें प्रयुक्त करे।

**४३ जिह्मश्ये चरितवे, आभोगाय इष्टये राये, दभ्रं पश्यद्भ्यः विचक्षसे, उर्विया उषाः विश्वा भुवना अजीगः** ( १।११३।५ ) — सोनेवालोंको उठाकर घुमानेके लिये, भोग प्राप्तिकी इच्छावालेको धन देनेके लिये, कम दीखनेवालेको अधिक दीखे इसलिये, यह विशाल उषा सब भुवनोंके पास आकर अपने प्रकाशसे सबको जगा रही है।

लोग सोते न रहें, उठें और अपने कार्य करें, प्रयत्न करके भोग प्राप्त करें, धन कमावें, अन्धेरेमें पडे न रहें पर प्रकाशमें आकर अपना अभ्युदयका साधन करें, इसीलिये उषा प्रकाशती है और सबोंको जगाती है।

**४४ क्षत्राय, श्रवसे महीयै इष्टये, अर्थं इत्यै, विसदृशा जीविता अभिप्रचक्षे उषा विश्वा भुवनानि अजीगः** ( १।११३।६ ) — शत्रुके साथ युद्ध करनेके लिये, यश प्राप्त करने के लिये, अन्न प्राप्त करनेके लिये, महान इष्ट कर्म करनेके लिये, पर्याप्त धन प्राप्त करनेके लिये, तथा विविध प्रकारके जीवनके साधन देखनेके लिये यह उषा प्रकाशती है और सब भुवनोंको जगाती है। यहां शौर्य, कीर्ति, धन, तथा भोग प्राप्त करनेके लिये मनुष्य उष कालमें उठे और जागे, ऐसा कहा है।

**४५ एषा दिवो दुहिता व्युच्छन्ती प्रत्यदर्शि** ( १।११३।७ )— यह स्वर्गकन्या उषा अन्धकार दूर कर रही है ऐसा दीखता है।

**शुक्रवासाः युवतिः विश्वस्य पार्थिवस्य वस्व ईशाना**— शुभ्र वस्त्र पहनकर यह तरुणी स्त्री सब पृथ्वीपरके धनका स्वामित्व कर रही है। इस उषाके आधीन सब धन है।

**हे उषः! अद्य इह व्युच्छ** — हे उषा! तू आज यहां आकर यहांका अन्धकार दूर कर।

**४६ परायतीनां पाथः अनु एति, आयतीनां शश्वतीनां प्रथमा, उषा व्युच्छन्ती, जीवं उदीरयन्ती, कंचन मृतं बोधयन्ती उषा** ( १।११३।८ ) — गत उषाओंके मार्गसे आती है, भविष्यमें आनेवाली उषाओंमें यह आजकी उषा प्रथम आयी है, यह अन्धकारको दूर करती है, जीवितोंको तो उठाती ही है, पर किसी किसी मृतको भी जगा देती है। अर्थात् आलसीको उत्साहित कर देती है।

**४७ हे उषः! यक्ष्यमाणान् मानुषान् यत् अजीगः, तत् अग्नः भद्रं देवेषु चकृषे** ( १।११३।९ ) — हे उषा! तुमने जो याजकोंको जगा दिया, वह कल्याण करनेवाला कर्म देवोंके लिये तुमने किया है। अब याजक यज्ञ करेंगे और उससे विश्वका कल्याण होगा।

**४८ कियति समया आ भवाति? याः व्यूषुः, याः च व्युच्छान्** ( १।११३।१० ) जो आचुकी, जो आनेवाली हैं और जो आयी हैं, ये उषाएं कबतक आती रहेंगी? रात्री और उषा कबतक आती रहेंगी? यह वर्णन बीचमें दिन न

होनेका वर्णन है। उत्तरीय ध्रुवमें एक उषाके पश्चात् ही दूसरी उषा आती है। तीस उष काल आनेके पश्चात् सूर्य दीखने लगता है। यह वर्णन ऐसे क्रमशः आनेवाली उषाओंका प्रतीत होता है।

**४९ ये मर्तास. व्युच्छन्तीं पूर्वतरां उषसं अपश्यन्, ते ईयु; अस्माभिः या प्रतिचक्ष्या अभूत्, ये च अपरीषु पश्यान्, ते यान्ति** ( १।११३।११ )— जो मनुष्य पूर्वकालकी प्रकाशती उषाको देखते थे वे चले गये, हम आज इस उषाको देख रहे हैं, ये हम भी चले जायगे। और जो आगामीनी उषाको देखेंगे, वे भी निःसंदेह जायंगे। यहां कोई स्थायी रहनेवाला नहीं है। उषा ही एक जैसी पुनः पुनः आती है। हम हमेशा उषाको देखेंगे ऐसी बात नहीं है।

**५० यावयत्-द्वेषाः ऋतपा. ऋतेजाः सुम्नावरी सूनृता ईरयन्ती सुमंगली देववीतिं बिभ्रती श्रेष्ठतमा उषः इह अद्य व्युच्छ** ( १।११३।१२ ) — शत्रुको दूर करनेवाली, सत्यका पालन करनेवाली, सत्यके प्रचारके लिये प्रसिद्ध, सुख बढानेवाली, मीठी वाणी बोलनेवाली, मंगल कामनावाली, देवोंकी प्रीतिके लिये यज्ञ करनेवाली श्रेष्ठ उषा आज प्रकाशित हो रही है। प्रकाश होनेके कारण शत्रु तथा डाकू भाग जाते हैं, प्रकाश होनेसे सत्य दीखता है, अन्धेरेमें छल कपट होता है। सूर्य प्रकाशसे सबका कल्याण होता है, दिनमें ही यज्ञ होते है, यह सब उषासे होता है, इस कारण उषा श्रेष्ठ है। यह आज प्रकाशित हो रही है।

५१ उषा पूर्व समयमें प्रकाशती रही, इस समय प्रकाश रही है, और भविष्यमें भी प्रकाश देती रहेगी। ऐसी यह तीनों कालोंमें प्रकाशनेके कारण अजर अमर उषा है, यह अपनी धारक शक्तिसे प्रकाशित होती रहे।

**५२ दिवः आतासु अञ्जिभिः व्यद्यौत्, देवी कृष्णां निर्णिजं अपावः, अरुणेभिः अश्वैः सयुजा रथेन आयाति, प्रबोधयन्ती** ( १।११३।१४ ) — आकाशमे चारों ओर यह उषा प्रकाश रही है, इस दिव्य उषाने काले अन्धेरेको दूर किया है, लाल घोडोंको अपने रथको जोता है और उस रथसे यह आती है और सबको जगा रही है।

**५३ पोष्या वार्याणि आवहन्ती, चेकिताना, चित्रं केतुं कृणुते। ईयुषीणां शश्वतीनां उपमा, विभातीनां प्रथमा उषाः व्यश्वैत्** ( १।११३।१५ ) पोषण करनेवाले स्वीकार करने योग्य धनोंको यह उषा लाती है, यह उषा सबको प्रकाश देती है, और सुन्दर तेज फैला रही है। यह आजकी उषा गत उषाओंमें अन्तिम है और आनेवाली उषाओंमें पहिली है, यह कैसी उत्तम चमक रही है देखो।

**५४ उदीर्ध्वं, असुः जीव नः आगात्, तमः अप आगात्, सूर्याय यातवे पन्थां आरैक्, यत्र आयुः प्रतिरन्त अगन्म** ( १।११३।१६ ) हे मनुष्यो! उठो, जागो, प्राण जैसा यह जीवन प्रकाश आ गया है, अन्धेरा दूर हुआ है, सूर्य के प्रकाशके लिये मार्ग हुआ है, वहां हम अपनी आयुको बढाते हुए प्रगति करेंगे।

**५५ हे मघोनि! अद्य उच्छ, अस्मे प्रजावत् आयुः नि दिदीहि** ( १।११३।१७ ) — हे शोभावाली उषा! आज तू प्रकाशित हो और हमें पुत्रपौत्रादिसे युक्त दीर्घायु दे। हमें उत्तम संतान हो और दीर्घ आयु भी मिले।

**५६ दाशुषे मर्त्याय गोमती. अश्वदाः सर्ववीराः उषसः व्युच्छन्ति** ( १।११३।१८ ) — दाता मानवोंको गौवें घोडे और वीर पुत्र देनेवाली उषाएं प्रकाशित हो रही हैं।

**५७ देवानां माता, अदितेः अनीकं, यज्ञस्य केतु बृहती विभाहि। न ब्रह्मणे प्रशस्तिकृत् विभाहि। न जने जनय** ( १।११३।१९ ) देवोंकी माता, अदितिके मुखके समान, तेजस्विनी तथा यज्ञके ध्वज जैसी यह विशाल उषा चमक रही है। हमारे ज्ञानकी चारों ओर प्रशंसा हो, इस तरह यह उषा प्रकाशती रहे। हे उषा! लोगोंमें उन्नतिके मार्गसे ले चलो।

**५८ उषसः चित्रं भद्रं अप्नः वहन्ति, तत् नः मित्रादयः मामहन्ताम्** ( १।११३।२० ) — उषाएं विलक्षण कल्याणकारी धन हमारे पास लाती हैं, उस धनको मित्रादि देव हमारे लिये बढा देवें।

**॥ कुत्स ऋषिका उषावर्णन समाप्त ॥**

# कक्षिवान् ऋषिका उषा वर्णन

( ऋ० १।१२३।१-१३ )

( कक्षीवान्दैर्घतमस औशिजः । उषाः । त्रिष्टुप् । )

५९ पृथू रथो दक्षिणाया अयोज्यैनं देवासो अमृतासो अस्थुः ।
कृष्णादुदस्थादर्या३ विहायाश्चिकित्सन्ती मानुषाय क्षयाय ॥ १ ॥

६० पूर्वा विश्वस्माद्भुवनादबोधि जयन्ती वाजं बृहती सनुत्री ।
उच्चा व्यख्यद्युवतिः पुनर्भूरोषा अगन्प्रथमा पूर्वहूतौ ॥ २ ॥

६१ यदद्य भागं विभजासि नृभ्य उषो देवि मर्त्यत्रा सुजाते ।
देवो नो अत्र सविता दमूना अनागसो वोचति सूर्याय ॥ ३ ॥

६२ गृहंगृहमहना यात्यच्छा दिवेदिवे अधि नामा दधाना ।
सिषासन्ती द्योतना शश्वदागादग्रमग्रमिद्भजते वसूनाम् ॥ ४ ॥

६३ भगस्य स्वसा वरुणस्य जामिरुषः सूनृते प्रथमा जरस्व ।
पश्चा स दध्या यो अघस्य धाता जयेम तं दक्षिणया रथेन ॥ ५ ॥

---

५९ ( दक्षिणायाः पृथुः रथः अयोजि ) इस दक्ष उषाका विस्तीर्ण रथ जोतकर तैयार हो चुका है। ( एनं अमृतासो देवासः आ अस्थुः ) इस रथपर अमर देव बैठ गये हैं। ( विहाया अर्या ) विशेष श्रेष्ठ यह उषा ( मानुषाय क्षयाय चिकित्सन्ती ) मनुष्योंके सुखपूर्वक निवासके लिये यत्न करती हुई ( कृष्णात् उत् अस्थात् ) अत्यंत काले अन्धकारसे ऊपर उठी है, प्रकाशित हुई है ॥ ( १ )

६० ( विश्वस्मात् भुवनात् पूर्वा अबोधि ) सब प्राणियोंके पहिले यह उषा जागृत होती है, यह उषा ( बृहती सनुत्री वाजं जयन्ती ) बडी दान करनेवाली तथा धन जीतनेवाली है। वह ( युवतिः ) तरुणी ( पुनः भूः ) पुनः पुनः होनेवाली ( पूर्वहूतौ प्रथमा उषाः ) प्रथम हवन करनेके समय प्रथम यजनीय उषा ( आ अगन् ) आगयी और ( उच्चा व्यख्यत् ) उच्च स्थानसे देखने लगी है ॥ ( २ )

६१ हे ( सुजाते देवि उषः ) उत्तम कुलीन दिव्य उषा ! ( मर्त्यत्रा ) मनुष्योंका पालन करनेवाली तू ( अद्य यत् भाग नृभ्यः विभजासि ) आज जो धनका भाग मनुष्योंको देती है ( अत्र ) उस समय ( दमूना सविता देवः ) दान देनेवाला जगत्का उत्पन्न करनेवाला देव ( नः सूर्याय अनागसः वोचति ) हम निष्पाप हैं ऐसा सूर्यके सामने कहे ॥ (३)

६२ ( अहना दिवे दिवे ) उषा प्रतिदिन ( गृहं गृहं अच्छ याति ) घर घर जाती है और ( नाम अधिदधाना ) यश अधिक धारण करती है। ( सिषासन्ती द्योतना शश्वत् आगात् ) हविर्भाग सेवन करनेवाली यह प्रकाशती हुई उषा प्रतिदिन आती है और ( वसूनां अग्रं अग्रं इत् भजते ) धनोंमें श्रेष्ठ भागका सेवन करती है ॥ ( ४ )

६३ हे ( सूनृते उषः )उत्तम भाषण करनेवाली उषा ! तू ( भगस्य स्वसा ) भग देवताकी सहोदरी और ( वरुणस्य जामिः ) वरुणकी बहिन है ऐसी तू ( प्रथमा जरस्व ) पहिले स्तुति होनेवाली हो। ( पश्चा ) इसके नंतर ( यः अघस्य धाता ) जो पापका धारण करनेवाला पापी शत्रु है ( स दध्या ) वह पकडा जायगा और ( तं दक्षिणया रथेन जयेम ) उसे तेरी दक्षतासे तथा रथसे हम पराजित करेंगे ॥ ( ५ )